उपाध्याय श्री लब्धिमुनि विरचितम्

युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरि चरितम्

सम्पादक :

भँवरलाल नाहटा

प्रकाशक :

अभयचंद सेठ

७, देवदार स्ट्रीट

कलकत्ता-१६

संवत् २०२७

मूल्य—गुरुभक्ति

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

उपाध्याय श्री लब्धिमुनि विरचितम्

युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरि चरितम्

सम्पादक :

भँवरलाल नाहटा

प्रकाशक :

अभयचंद सेठ

७, देवदार स्ट्रीट

कलकत्ता-१६

संवत् २०२७

मूल्य—गुरुभक्ति

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

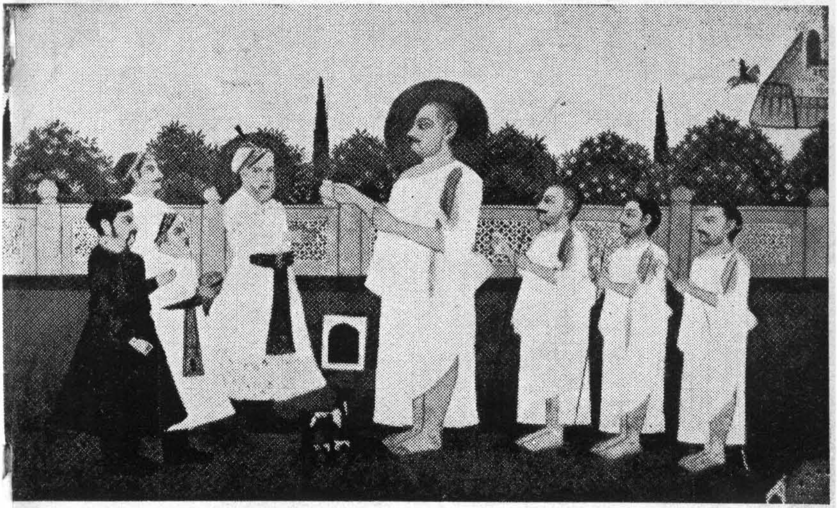

युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि और सम्राट अकबर

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

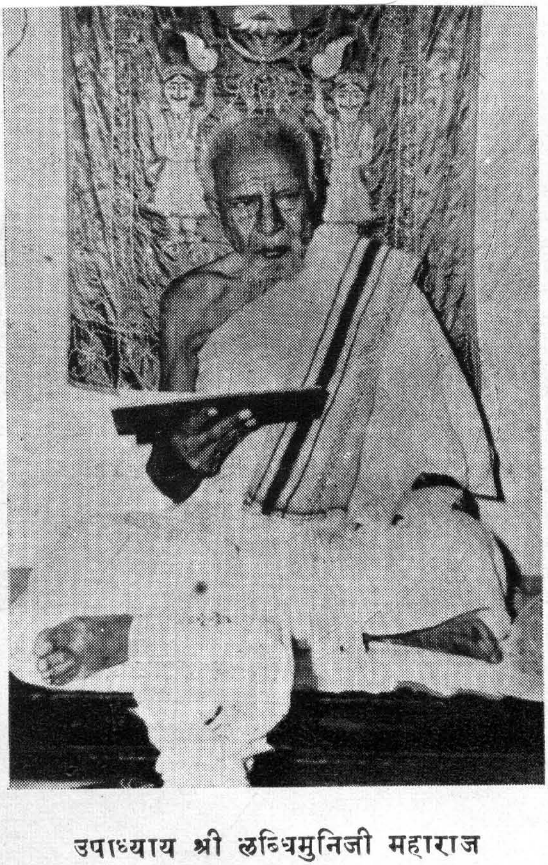

उपाध्याय श्री लब्धिमुनिजी महाराज

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

उपाध्याय श्री लब्धिमुनिजी

बीसवीं शताब्दी के महापुरुषों में खरतर गच्छ विभूषण श्री मोहनलालजी महाराज का स्थान सर्वोपरि है। वे बड़े प्रतापी, क्रियापात्र, त्यागी-तपश्री और वचनसिद्ध योगी पुरुष थे। उनमें गच्छ कदाग्रह न होकर संयम साधन और सम-भावी-श्रमणत्त्व सुविशेष था। उनका शिष्य समुदाय भी खरतर और तपा दोनों गच्छों की शोभा बढाने वाला है। उ० श्री लब्धिमुनिजी महाराज ने आपके वचनामृत से संसार से विरक्त होकर संयम स्वीकार किया था।

श्री लब्धिमुनिजी का जन्म कच्छ के मोटी खाखर गाँव में हुआ था। आपके पिता दनाभाई देढिया वीसा ओसवाल थे। सं० १९३५ में जन्म लेकर धार्मिक संस्कार युक्त माता-पिता की छत्र छाया में बड़े हुए। आपका नाम लधाभाई था। आपसे छोटे भाई नानजी और रतनबाई नामक बहिन थी। सं० १९५८ में पिताजी के साथ बम्बई जाकर लधाभाई भायखला में सेठ रतनसी की दुकान में काम करने लगे। यहाँ से थोड़ी दूर सेठ भीमसी करमसी की दुकान थी, उनके ज्येष्ठ पुत्र देवजी भाई के साथ आपकी घनिष्टता हो गई क्योंकि वे भी धार्मिक संस्कार वाले व्यक्ति थे। सं० १९५८ में प्लेग की बीमारी फैली जिसमें सेठ रतनसी भाई चल बसे।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

उनका स्वस्थ शरीर देखते देखते चला गया, यही घटना संसार की क्षणभंगुरता बताने के लिए आपके संस्कारी मन को पर्याप्त थी। मित्र देवजी भाई से बात हुई, वे भी संसार से विरक्त थे। संयोगवश उसी वर्ष परमपूज्य श्री मोहनलालजी महाराज का बम्बई में चातुर्मास था। दोनों मित्रों ने उनकी अमृत-वाणी से वैराग्य वासित होकर दीक्षा देने की प्रार्थना की।

पूज्यश्री ने मुमुक्षु चिमनाजी के साथ आपको अपने विद्वान शिष्य श्री राजमुनिजी के पास आबू के निकटवर्त्ती मंढार गांव में भेजा। राजमुनिजी ने दोनों मित्रों को सं० १९५८ चैत्रवदि ३ को शुभमुहूर्त्त में दीक्षा दी। श्रीदेवजी भाई रत्नमुनि (आचार्य श्रीजिनरत्नसूरि) और लधाभाई लब्धिमुनि बने। प्रथम चातुर्मास में पंच प्रतिक्रमणादि का अभ्यास पूर्ण हो गया। सं० १९६० वैशाख सुदी १० को पन्यास श्री यशोमुनि (आ० जिनयशःसूरि) जी के पास आप दोनों की बड़ी दीक्षा हुई। तदन्तर सं० १९७२ तक राजस्थान, सौराष्ट्र, गुजरात और मालवा में गुरुवर्य श्रीराजमुनिजी के साथ विचरे। उनके स्वर्गवासी हो जाने से डग में चातुर्मास कर के सं० १९७४-७५ के चातुर्मास बम्बई और सूरत में पं० श्री ऋद्धिमुनिजी और कान्तिमुनिजी के साथ किये। तदनंतर कच्छ पधार कर सं० १९७६-७७ के चातुर्मास भुज व मांडवी में अपने गुरु भ्राता श्री रत्नमुनिजी के साथ किये।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सं० १६७८ में उन्हीं के साथ सूरत चौमासा कर १६७६ से ८५ तक राजस्थान व मालवा में केशरमुनिजी व रत्नमुनिजी के साथ विचरकर चार वर्ष बम्बई विराजे। सं० १६८६ का चौमासा जामनगर करके फिर कच्छ पधारे। मेराऊ, मांडवी, अंजार, मोटीखाखर, मोटा आसंबिया में क्रमशः चातुर्मास कर के पालीताना और अहमदाबाद में दो चातुर्मास व बम्बई, घाटकोपर में दो चातुर्मास किये। सं० १६६६ में सूरत चातुर्मास कर के फिर मालवा पधारे। महीदपुर, उज्जैन, रतलाम में चातुर्मास कर सं० २००४ में कोटा, फिर जयपुर, अजमेर, ब्यावर और गढसिवाणा में सं० २००८ का चातुर्मास बिता कर कच्छ पधारे सं० २००६ में भुज चातुर्मास कर श्री जिनरत्नसूरिजी के साथ ही दादावाड़ी की प्रतिष्ठा की। फिर मांडवी, अंजार, मोटाआसंबिया, भुज आदि में विचरते रहे। सं० १६७६ से २०११ तक जब तक श्रीजिनरत्न सूरि जी विद्यमान थे, अधिकांश उन्हीं के साथ विचरे, केवल दस बारह चौमासे अलग किये थे। उनके स्वर्गवास के पश्चात् भी आप वृद्धावस्था में कच्छ देश के विभिन्न क्षेत्रों को पावन करते रहे।

आप बड़े विद्वान, गंभीर और अप्रमत्त विहारी थे। विद्यादान का गुण तो आपमें बहुत ही श्लाघनीय था। काव्य, कोश, न्याय, अलंकार, व्याकरण और जैनागमों के दिग्गज विद्वान होने पर भी सरल और निरहंकार रहकर न

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

केवल अपने शिष्यों को ही उन्होंने अध्ययन कराया अपितु जो भी आया उसे खूब विद्या दान किया। श्री जिनरत्न-सूरि जी के शिष्य अध्यात्म-योगी सन्त प्रवर श्रीभद्रमुनि (सहजानंदघन) जी महाराज के आप ही विद्यागुरु थे। उन्होंने विद्यागुरु की एक संस्कुत व छः स्तुतियाँ भाषा में निर्माण की जो 'लब्धि जीवन प्रकाश' में प्रकाशित हैं।

उपाध्यायजी महाराज अधिक समय जाप में तो बिताते ही थे पर संस्कृत काव्य रचना में आप बड़े सिद्ध-हस्त थे। सरल भाषा में काव्य रचना करके साधारण व्यक्ति भी आसानी से समझ सके इसका ध्यान रख कर क्लिष्ट शब्दों द्वारा विद्वता प्रदर्शन से दूर रहे। आप संस्कृत भाषा के विद्वान और आशुकवि थे सं० १९७० में खरतर गच्छ पट्टावली की रचना आपने १७४५ श्लोकों में की। सं० १९७२ में कल्प-सूत्र टीका रची नवपद स्तुति, दादासाहब के स्तोत्र, दीक्षा-विधि, योगोद्वहन विधि आदि की रचना आपने १९७७-७९ में की। सं० १९९० में श्रीपाल चरित्र रचा।

सं० १९८२ में युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि ग्रन्थ प्रका-शित होते ही तदनुसार १२१२ श्लोक और छः सर्गों में संस्कृत काव्य रच डाला सं० १९८० में आपने जेसलमेर चातुर्मास में वहाँ के ज्ञानभंडार से कितने ही प्राचीन ग्रंथों की प्रतिलिपियां की थी। सं० १९९६ में ६३२ पद्यों में

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री जिनकुशलसूरि चरित्र, सं० १६६८ में २१० श्लोकों में मणिधारी श्रीजिनचन्द्रसूरि चरित्र एवं सं० २००५ में ४६८ श्लोक मय श्री जिनदत्तसूरि चरित्र काव्य की रचना की।

सं० २०११ में श्री जिनरत्नसूरि चरित्र सं० २०१२ में श्रीजिनयशःसूरि चरित्र, सं० २०१४ में श्री जिनऋद्धिसूरि चरित्र, सं० २०१५ में श्री मोहनलालजी महाराज का जीवन चरित्र श्लोकबद्ध किया। इस प्रकार आपने नौ ऐतिहासिक काव्यों के रचने का अभूतपूर्व कार्य किया। इनके अतिरिक्त आपने सं० २००१ में आत्म भावना सं० २००५ में द्वादश पर्व कथा, चैत्यवन्दन चौवीसी, वीसस्थानक चैत्यवन्दन, स्तुतियें और पांचपर्व-स्तुतियों की भी रचना की। सं० २००७ में संस्कृत श्लोकबद्ध सुसढ चरित्र का निर्माण व २००८ में सिद्धाचलजी के १०८ खमासमण भी श्लोकबद्ध किये।

आपने जैनमन्दिरों, दादावाड़ियों और गुरु चरण मूर्त्तियों की अनेक स्थानों में प्रतिष्ठाएं करवायी। आपके उपदेश से अनेक मंदिरों का नव निर्माण व जीर्णोद्धार हुआ। सं० १६७३ में पणासली में जिनालय की प्रतिष्ठा कराई। सं० २०१३ में कच्छ मांडवी की दादावाड़ी का माघ बदि २ के दिन शिलारोपण कराया। सं० २०१४ में निर्माण कार्य सम्पन्न होने पर श्री जिनदत्तसूरि मन्दिर की प्रतिष्ठा करवायी और धर्मनाथ स्वामी के मन्दिर के पास खरतर गच्छोपाश्रय में

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री जिनरत्न सूरि जी की मूर्त्ति प्रतिष्ठा करवायी। सं० २०१६ में कच्छ-भुज की दादावाड़ी में सं० हेमचन्द भाई के बनवाये हुए जिनालय में संभवनाथ भगवान आदि जिन बिम्बों की अञ्जनशलाका करवायी। और भी अनेक स्थानों में गुरु महाराज और श्री जिनरत्नसूरि जी के साथ प्रतिष्ठादि शासनोन्नायक कार्यों में बराबर भाग लेते रहे।

ढाई हजार वर्ष प्राचीन कच्छ देश के सुप्रसिद्ध भद्रेश्वर तीर्थ में आपके उपदेश से श्री जिनदत्तसूरि जी आदि गुरु-देवों का भव्य गुरुमन्दिर निर्मित हुआ। जिसकी प्रतिष्ठा आपके स्वर्गवास के पश्चात् बड़े समारोह पूर्वक गणिवर्य श्री प्रेममुनिजी व श्री जयानंदमुनिजी के करकमलों से स० २०२६ वैशाख सुदि १० को सम्पन्न हुई।

उपाध्याय श्री लब्धिमुनिजी महाराज बाल-ब्रह्मचारी, उदारचेता, निरभिमानी, शान्त-दान्त और सरल प्रकृति के दिग्गज विद्वान थे। आप ६५ वर्ष पर्यन्त उत्कृष्ट संयम साधना करके ८८ वर्ष की आयुमें सं० २०२३ में कच्छ के मोटा आसंविया गाँव में स्वर्ग सिधारे।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

संपादकीय

इतिहास से प्रेरणा व मार्गदर्शन मिलता है। महापुरुषों के चरित्र पढ़ने से अपनी आत्मा में गुणों का प्रादुर्भाव होता है इसीलिये पूर्वजों-पूर्वाचार्यों की गुण गाथा गाने की प्रथा चिरकाल से चली आरही है। शोध के अभाव में प्रचुर इतिहास सामग्री ज्ञानभण्डारों में बंद पड़ी रही व बहुतसी नष्ट भी हो गई। गत चालीस वर्षों में हमने इस ओर ध्यान दिया तो संख्याबद्ध ऐतिहासिक भाषा व प्राकृतादि के काव्य-रासादि उपलब्ध हुए। हमने जब समयसुन्दरजी के साहित्य-शोध प्रसंग में उनके दादागुरु अकबर प्रतिबोधक श्रीजिनचन्द्र-सूरिजी का 'जीवनचरित्र देखा तो कुल चार पांच पृष्ट की सामग्री ही लगी। श्रीहीरविजयसूरि जी सम्बन्धी प्रचुर रास-काव्य आदि एतिहासिक ग्रंथ प्रकाश में आ गये थे पर उन्हीं के समकालीन चौथे दादा साहब युगप्रधान जिनचन्द्रसूरिजी का इतिहास सर्वथा नगण्य उपलब्ध था। श्रीपूज्यजी श्रीजिन चरित्रसूरिजी ने एक विद्वान से काव्य निर्माण प्रारंभ भी करवाया था पर सामग्री संकलन के अभाव में वह यों ही रह गया। हमने पैंतीस वर्ष पूर्व जब प्रमाण पुरस्सर जीवन

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

चरित्र प्रकाशित किया तो चारित्र-चूडामणि विद्वत् शिरोमणी आशुकवि उपाध्याय श्री लब्धिमुनिजी महाराज ने अपने सहज इतिहास प्रेम और काव्य प्रतिभा से तुरन्त उसे काव्य का रूप देकर एक बहुत बड़े अभाव की पूर्त्ति कर दी। उन्होंने सं० १६७० में सर्वप्रथम खरतर गच्छ पट्टावली का १७४५ श्लोकों में निर्माण किया था फिर बाईस वर्ष के पश्चात् इस ऐतिहासिक काव्य की रचना कर के अपने हाथ से लिख कर साथ ही साथ हमें भेज दिया इस प्रकार ऐतिहासिक चरित्र निर्माण का सिलसिला प्रारंभ किया और हमारे लिखित चारों दादासाहब के जीवनचरित्रों के चार काव्य व मोहनलालजी महाराज, जिनरत्नसूरिजी, जिनयशःसूरिजी, जिनऋद्धिसूरिजी के जीवन चरित्र—इस प्रकार आठ ऐतिहासिक काव्यों का निर्माण कर डाला। साथ साथ आपने और भी कई ग्रन्थ काव्यमय निर्माण किये थे परऐति-काव्य सभी अप्रकाशित हैं।

चारों दादासाहब के जीवनचरित्र प्रकाशित हुए और उनके गुजराती अनुवाद भी गणिबर्य श्री बुद्धिमुनिजी महाराज ने सुसम्पादित रूप में प्रकाशित किये तो गुरुभक्त श्री अभयचंद जी सेठ व उनके लघु भ्राता लक्ष्मीचंद जी सेठ आनंद विभोर हो गये। उन्होंने जब चारों दादा साहब के संस्कृत चरित्र भी अप्रकाशित पड़े हैं, सुना तो उन्हें प्रकाशित करने की प्रबल इच्छा बतलाई और साथ साथ पूज्य उपाध्याय जी महाराज की खरतर गच्छ पट्टावली को भी छापने की भावना व्यक्त

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

की। साथ ही साथ ग्रन्थों को मंगाकर उनकी नकल-प्रेस-कापी तय्यार कर संशोधन, प्रकाशन तक की सारी जिम्मेवारी मेरे पर डाल दी। मैंने इन पांचो ग्रन्थों की प्रेसकापी तो अविलंब कर डाली पर छापने का काम में विलम्ब ही विलम्ब होता गया। इसी बीच उपाध्यायजी महाराज का स्वर्गवास हो गया वे अपने जीवन में इन ग्रन्थों को प्रकाशित नहीं देख सके। लक्ष्मीचंदजी ने अपने बड़े भ्राता श्री अभयचंदजी से निवेदन किया तो उन्होंने इन ग्रन्थों को शीघ्र प्रकाशित कर देना स्वीकार किया पर विधि को विलम्ब स्वीकार था और लम्बे समय के बाद केवल युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि चरित्र ही प्रकाश में आ रहा है। दूसरे काव्यों को भी प्रकाशित करने की भावना होते हुए भी केवल मणिधारी श्रीजिनचंद्रसूरिजी का जीवनचरित-काव्य उनके अष्टम शताब्दी महोत्सव के उपलक्ष में प्रकाशित स्मृत ग्रन्थ में दिया गया है अवशिष्ट काव्य-ग्रन्थों को भविष्य में शीघ्र प्रकाशित करने का विचार है।

प्रस्तुत युगप्रधान जिनचंद्रसूरि चरित ६ सर्गों में विभक्त है और इस में कुल १२१२ पद्य और कुछ गद्य भी है। हमारे साधु-साध्वी इस संस्कृत चरित्र को व्याख्यानादि में स्थान दें तो जनता को महान् शासन-प्रभावक आचार्य की जीवनी का आवश्यक परिचय मिल सकेगा। यों हमारे मूल हिन्दी ग्रन्थ का गुजराती अनुवाद स्वर्गीय गुलाबमुनिजी की प्रेरणा

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

से दुर्लभकुमार गांधी ने किया है जिसका संपादन एवं संशोधन पूज्य गणिवर्य बुद्धिमुनिजी ने बड़े ही परिश्रम के साथ सं० २०१८ में श्री मन्मोहन यशः स्मारक ग्रंथमाला ग्रन्थाक ३० में प्रकाशित करवा दिया है अतः गुजराती भाषा-भाषी बन्धु उस ग्रन्थ से लाभ उठावें।

मुसलमानी साम्राज्य के समय जैनधर्म एवं तीर्थों की रक्षा तथा अहिंसा प्रचार का जो विशिष्ट कार्य युगप्रधान जिनचंद्रसूरिजी जैसे महान् आचार्यों ने किया उसकी जानकारी सभी धर्म प्रेमी और गुरु भक्तों को होनी ही चाहिए आशा है गुरुदेव के आदर्श चरित्र से प्रेरणा ग्रहण कर जैन संघ विश्व में जैन धर्म के प्रचार का सत्प्रयत्न करेगा।

भँवरलाल नाहटा

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

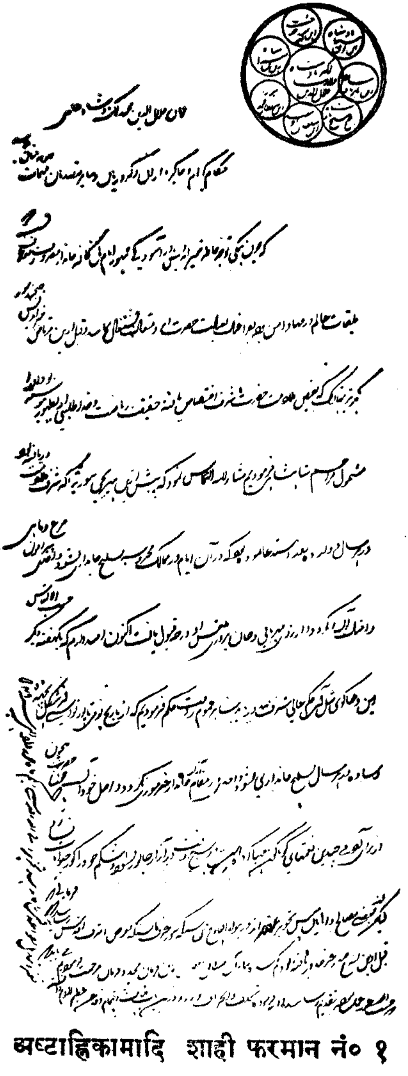

अष्टाह्निकामादि शाही फरमान नं० १

अष्टान्हिकामारि शाही फरमान

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

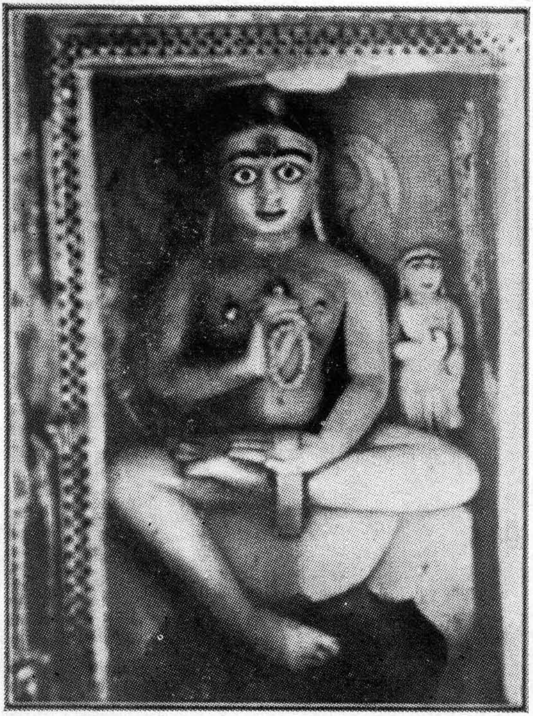

युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि मूर्त्ति
(आदिनाथमंदिर, नाहटों की गवाड़, बीकानेर)

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

॥ अर्हम् ॥

उपाध्याय श्री लब्धिमुनि विरचितं

अकबरशाहप्रतिबोधक

युगप्रधान श्री जिनचंद्रसूरिचरितम्

प्रथमः सर्गः

वन्देऽहं वीतरागं च सर्वज्ञमिन्द्रपूजितम् ।
यथार्थवस्तुवक्तारं, श्रीवीरं त्रिजगद्गुरुम् ॥१॥

स्तुवेमर्त्येश्वरैरर्च्यान्, सूरि-चक्रमतल्लिकाः ।
श्री जिनदत्तसूरीन्द्रान्, जिनकुशल-सद्गुरून् ॥२॥

राजेश साह्यकबर-प्रतिबोधकस्य,
श्री जैनशासन-समुन्नति-कारकस्य ।
मीनादि जन्तु कृपया विषयेऽत्र रम्यं,
संकीर्त्यते हि चरितं जिनचंद्रसूरेः ॥३॥

जंबूद्वीपाभिधोद्वीपो, विद्यतेऽस्मिन् रसातले ।
सर्वद्वीप समुद्राणां, मध्यवर्त्ती सुवर्तुलः ॥४॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

लक्षयोजन विष्कंभा-यामो मध्यस्थितेन च ।
लक्षैक योजनोच्चैःसु-मेरु शैलेन शोभितः ॥५॥

वज्रमय्या जगत्या च, योजनाष्टक-तुङ्गया ।
सर्व दिक्षु परिक्षिप्तः प्राकारेणैव सत्पुरम् ॥६॥

वर्षैः सप्तभिराकीर्णः षड्भिः कुलमहीधरैः ।
सूर्यद्वयेन्दुयुग्मेन, प्रद्योतितरसातलः ॥७॥ चतुर्भिःकलापकम्

तत्र दक्षिणतो मेरो-र्हिमवत्पर्वतादपि ।
द्वीपान्ते सागराभ्यर्णेऽस्ति क्षेत्रं भरताभिधम् ॥८॥

सारूढ जीवकोदण्डा-कारं विष्कम्भतः पुनः ।
पंचशतक षड्विंश-योजन-षट्-कलामितं ॥९॥

पूर्वापरायतेनान्तः-स्थितेन सम भागतः ।
वैताढ्येन द्विधाभूतं, दक्षिणोत्तरसंज्ञया ॥१०॥

हिमवन्निर्गताभ्यान्तं, भीत्वा वैताढ्य पर्वतम् ।
यांतीभ्यां सागरे गङ्गा-सिन्धुभ्यां षट्कखण्डवत् ॥११॥

चतुर्भिःकलापकम्

तत्र दक्षिणखण्डेषु, मध्यखण्डं पवित्रितम् ।
शत्रुञ्जयादितीर्थार्हत्कल्याणकसुभूमिभिः ॥१२॥

यत्रार्हच्चक्रवर्त्यादि-त्रिषष्ठि पुरुषोत्तमाः ।
उत्पद्यंते परेप्यर्ह-च्छाशनोद्योतकारिणः ॥१३॥

तत्र मर्वाख्यदे-शोस्ति, सर्वदेशशिरोमणिः ।
यत्र वसंति दातारो, धनिनः सुखिनो जनाः ॥१४॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तत्र खेतसर ग्राम, ईतिभीत्यादि-वर्जितः ।
समाकीर्णः प्रभूतैश्च, धनधान्यचतुष्पदैः ॥१५॥
तत्रौसवंश जातीय उवास गोत्र-रीहडः ।
श्रीवंताख्य वणिक् श्रेष्ठः श्राद्धगुण-समन्वितः ॥१६॥
तस्य प्रिया श्रियादेवी, पतिव्रता गुणिन्यभूत् ।
रूपेण सुरदेवीव, शीलालङ्कारधारिणी ॥१७॥
भुञ्जानायाः समं पत्या, योग्यं सांसारिकं सुखम् ।
कुर्वन्त्याः श्राद्धकृत्यानि, तस्याः कालः कियान् ययौ ॥१८॥
सुस्वप्न-सूचितः कश्चि-ज्जीवः पुण्यप्रभाविकः ।
अन्यदा सुखसुप्ताया-स्तस्या कुक्षाववातरत् ॥१९॥
तस्या गर्भ-प्रभावेन, जायन्ते शुभदोहदाः ।
समग्रशुभकार्येषु, जाता मति-विशेषतः ॥२०॥
पृथवी रत्नगर्भेव, गर्भ-रत्नबभार सा ।
गर्भकाले व्यतीतेऽथ, सुखं सुखेन सा सती ॥२१॥
संवद्बाणाङ्क बाणेन्दु-वर्षे चैत्रासिते तिथौ ।
द्वादश्यां शुभवेलायां, पुत्ररत्नमजीजनत् ॥२२॥
ततः काचित्समेत्याशु कुमारी श्रेष्ठिनं जगौ ।
भो श्रेष्ठिन् ! वर्द्धसे श्रेष्ठ-तनुज-जन्मना खलु ॥२३॥
स पुत्र-जन्मना प्रीत-स्तस्यै विभूषणादिकम् ।
दत्त्वा पुनर्गृहं गत्वा, द्वितीयायामिवोडुपम् ॥
निधानमिव पुण्यानां, बालादित्यमिवोदितम् ।
सूरिलक्षणसम्पूर्णं, ददर्श तत्र बालकम् ॥२५॥ युग्मम्॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

ग्रह-बलाबलं दृष्ट्वा, गणकोपि जगाद तम् ।
भो श्रेष्ठिन्! तव पुत्रोऽयं, धर्मनेता भविष्यति ॥२६॥
धर्मनेतृशिरोरत्नं, भावी महाप्रभाविकः ।
संबोध्यानेकशो जीवान्, प्रापयिष्यति सद्गतिम् ॥२७॥ युग्मम्
स्वजनादिभिरानीतं, संप्रीतैः पुत्र-जन्मना ।
वस्त्राभरण-दीनार-श्रीफलादि ललौसकः ॥२८॥
श्रीवन्तोऽपि ददौ वस्त्रा-भरण श्रीफलादिकम् ।
स्वजनेभ्यो यथायोग्यं, विधाप्य भोजनादिकम् ॥२६॥
तत एकादशे घस्त्रे, निष्कास्य सूतकं गृहात् ।
सम्प्राप्ते द्वादशे तेन, स्वजनादयो निमन्त्रिताः ॥३०॥
सो भोजयत्सुपक्वान्न---शाक-दाल्योदनादिकम् ।
प्रभुक्तोत्तरकालेऽदा,-त्तेभ्यः पुगीफलादिकम् ॥३१॥
ततः सुखासनस्थानां, स्वजनानां पुरो मुदा ।
स 'सुलतान' इत्याख्यां, स्वपुत्रस्य समर्पयत् ॥३२॥
सुलतानकुमारोऽथ, वर्द्धतेस्म दिने दिने ।
वयसा कान्तिरूपाभ्यां, द्वितीया चंद्रमा इव ॥३३॥
पठनाय यदा योग्यो जातो प्रैषीत्तदा पिता ।
कलाचार्यसमीपं तं-कलाभ्यासाय बालकम् ॥३४॥
सुलतानकुमारोसौ, व्यावहारिक-धार्मिकाः
सकलाः स्वल्पकालेन, कला जग्राह बुद्धिमान् ॥३५॥
आसीदितः श्रीजिनवर्द्धमान-प्रभोरविच्छिन्नपरम्परायाम्
संविग्न मुख्यो वसतौ निवास, उद्योतनाचार्यवरो मुमुक्षुः ॥३६॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तदीय पट्टे गुरुजिन वर्द्धमान-सूरीश्वरो भूद्धरणेन्द्र-वंद्यः ।
यश्चार्बुदाद्रौ गुणवर्द्धमानो व्युच्छिन्नतीर्थं प्रकटी चकार ॥३७॥
श्रीमत्सूरि जिनेश्वराभिधगुरुः पट्टे तदीयेऽभवत् ।
प्राज्ञः श्री अणहिल्लपत्तनपुरे खेभाभ्रभूवत्सरे ॥
श्रीमद् दुर्लभराज पर्षदिवरे विद्वत्समक्षं यतीन् ।
चैत्यस्थान्प्रविजित्य यो विधिपथं संस्थापयामासिवान् ॥३८॥
राज्ञा तदा खरतराख्यमदायि तस्मै
सत्यत्वतः सुगुरवे विरुदं यथार्थम् ।
चारित्रिणे सुविहिताय ततः परं त-
च्छब्देन तस्यहिगणोऽपितिः प्रसिद्धम् ॥३६॥
सत्यत्वतः खरतरः समयानुसारा-
नुष्ठानतः सुविहितो वसतौ निवासात् ।
श्री शासने वसति वास्य मलार्हतेऽस्मिन्.
शब्दत्रयेण हि तदीय गणो विभाति ॥४०॥
तदीय पट्टे जिनचंद्रसूरि-
युगप्रधानश्च बभूव तस्य ।
सूत्रार्थतोष्टादशनाममालाः
कण्ठाग्रमासन्मुनिसत्तमस्य ॥४१॥
तदीय पट्टे ऽभयदेवसूरि-
रासीन्नवाङ्गी-वर-वृत्तिकर्त्ता ।
प्रभाविकः स्तंभनपार्श्वनाथ-
मूर्त्ति वरां यः प्रकटीचकार ॥४२॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तदीय पट्टे जिनवल्लभाख्य-
सूरीश्वरः सूरिगुणप्रधानः ।
बभूव विद्धस्त विसर्पमाण प्रचण्ड पाखण्ड मतप्रचारः ॥४३॥
तत्पट्टे जिनदत्तसूरि रभवन्माद्यत्प्रचण्डाखिल-
पाखण्डस्मय-भंजकः सुचरण ज्ञान-क्रिया सत्तमः
मिथ्याध्वान्त-निरुद्ध दर्शन रविः श्राद्धांबरा राधितां-
बासं प्राप्त युगप्रधान-पदवि योगीन्द्रचूडामणिः ॥४४॥
तदीय पट्टे जिनचंद्रसूरि-र्बभूव सन्मार्ग विधिप्रकाशी ।
चिन्तामणि र्भालतले यदीये,
प्रोवास वासादिव भाग्यलक्ष्म्याः ॥४५॥
तत्पट्टे मुनिपुङ्गवो जिनपति प्रख्यः प्रशान्तोऽजनि,
श्री वागीश्वरमुख्यकः सुचरण ज्ञान-क्रिया-संयुतः
षट्त्रिंशद्वरवाद लब्धविजयः प्रज्ञो र्जितान्वादिनो
जित्वा व्याकरणेतिहास-विशदन्यायादिविच्छेखरः ॥४६॥
तदीय पट्टेच जिनेश्वराख्या- चार्या बभूवुर्हतमोहमानाः
संक्षोभिता-शेषकुमार्ग-सार्थाभवार्त्त भीतांग्यभयप्रदाहि ॥४७॥
तदीय पट्टेच जिनप्रबोध-सूरीश्वरोभूज्जनित प्रबोधः
जने निरुद्धाऽखिल मोहयोधः, समग्र सिद्धान्त वरेद्धबोधः ॥४८॥
तदीयपट्टे जिनचंद्रसूरि, र्बभूव दूरीकृत संवरारिः ।
प्राज्ञप्रकर्षाज्जितदेवसूरि गुणौघसंतोषित-सर्व-सूरिः ॥४९॥
तेनाबोधिचतुर्नृपाः सुगुरुणा तस्माच्चसूरीश्वरात्
सुख्यातिं प्रगतो गणः खरतरः श्री राजगच्छाख्यया ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

जित्वा वादिगणान् विशारदसभाप्राप्तान् स विद्वत्तया
सूरीशः कलिकालकेवलितया लोके प्रसिद्धिं गतः ॥५०॥

आसीज्जिनादिःकुशलाख्यसूरि, स्तदीयपट्टे मुनिसत्तमोस्ति।
अद्यापि सर्वत्र च सप्रभावा, यत्पादुका सज्जनपूज्यमाना ॥५१॥

तदीय पट्टे जिनपद्मसूरि र्ज्ञानादि पद्मा-परिभूषितो ऽभूत्।
संसार-पद्माकर भव्य पद्म,-सूर्यश्च विद्वन्नतपादपद्मः ॥५२॥

सरस्वत्याः प्रसन्नेन, बभूवुस्ते प्रधारकाः।
बालधवलकूर्चाल-भारती विरुदस्य च ॥५३॥

तदीय पट्टे जिनलब्धिसूरि, र्बभूव संप्राप्तमुनित्व शोभः।
संपादिता-शेषसुखादिलाभो, विद्याचणश्चाष्टनिधानवक्ता ॥५४॥

तदीय पट्टे जिनचंद्रसूरिः शुद्धाशयोभूद्गतमानमायः।
स्वर्गापवर्गातुलसौख्यदायि—ज्ञानादि संसाधन सावधानः ॥५५॥

तदीयपट्टे परिपालयन्तः, पंच प्रकारं परिभावयन्तः।
आचारवन्तमासंश्च जिनोदयाख्य-
सूरीश्वराः सन्मुनिसेवनीयाः ॥५६॥

सूत्रार्थरत्नौघविनाशितान्त-
मिथ्यान्धकारो जिनराजसूरिः।
तदीय पट्टे जनि तार्किकेषु,
मुख्यः प्रसंतोषितभव्य-जीवः ॥५७॥

तदीय पट्टे जिनभद्रसूरि-
र्भद्रः प्रकृत्या कृतभूरिभद्रः।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रभूतसैद्धान्तिक पुस्तकानि,
येनोपकाराय विलेखितानि ॥५८॥
तदीय पट्टे जनि भव्यजीव-
धर्मोपदेशार्पण-सावधानः ।
सद्गच्छ-संधारण मेढिकल्पः,
सूरीश्वरः श्रीजिनचन्द्र नामा ॥५९॥
तदीय पट्टे समभूज्जिनादि-
समुद्रसूरि-मुनि-धर्मरक्तः ।
शास्त्रानुसारेण जगद्विवर्त्ति-
पदार्थ-सार्थ-प्रवरोपदेशी ॥६०॥
तदीय पट्टे जिनहंससूरि-
स्त्रिगुप्तिगुप्तो विशदाशयोऽभूत् ।
प्राज्ञो विशुद्धाचरणः प्रवादि-
स्तंभेरमोच्छेदन सिंह कल्पः ॥६१॥
तदीय पट्टे समभूज्जिनादि-
माणिक्यसूरिश्च महाव्रतीशः ।
दुर्वार-पाखण्ड-मतावलंबि-
वाग्मेघमाला हरणैकवायुः ॥६२॥
चारित्रपूतैर्मुनिभिश्च सार्द्धं,
ग्रामानुग्रामं प्रपवित्रयंतः ।
जिनादिमाणिक्यमुनीश्वरास्ते-
ऽन्यदापुरं खेतसरं प्रजग्मुः ॥६३॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तत्रत्य वासी नव वार्षिकः स,
श्रीवन्त पुत्रः सुलतान बालः ।
धर्मोपदेशेन समेत्य तेषां,
भवस्वरूपं गलनं प्रबुद्धः ॥६४॥

ततश्च माता-पितरौ प्रबोध्य,
तयोरनुज्ञां सुलतानबालः ।
संगृह्य संवद्युग खांग चन्द्र–
वर्षे ललौ तत्र महेन दीक्षाम् ॥६५॥

जिनमाणिक्यसूरीणा-मसौ शिष्यतया जनि ।
ततः परं गतः ख्यातिं, 'सुमतिधीर' संज्ञया ॥६६॥

सुसंस्कृत-प्राकृत-शब्द-शास्त्र-
साहित्यछन्दोनय-शब्द-कोषान् ।
स स्वल्पकालेन जिनागमांश्च,
पपाठ सम्यक् सुगुरोः समीपात् ॥६७॥

क्रमात्स षट्दर्शनशास्त्रवेत्ता,
गीतार्थमुख्यो भवदिद्धबोधः ।
व्याख्यान-शास्त्रार्थ-विधिप्रवीणो,
गांभीर्य-धैर्यादि गुणप्रधानः ॥६८॥

जिनादिमाणिक्य गुरुः प्रगच्छन्,
देराउराज्जेसलमेरु-मार्गम् ।
संवत्करेलांग-शशांक-वर्षे,
समाधिना मृत्युमवाप सूरिः ॥६९॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

ततो विहारं प्रविधाय शोका-
कुलश्चतुर्विंशति–शिष्यवर्गः ।
माणिक्यसूरेर्यतयो ऽपरेऽपि,
समाययु र्जेसलमेरुदुर्गम् ॥७०॥

तदीय पट्टे जिनचंद्रसूरि,
रासीन्मुदा श्रीपतिसाहिना हि ।
यस्मै स्वशक्त्या प्रतिबोधितेन,
युगप्रधानाख्य-पदं प्रदत्तम् ॥७१॥

जिनसमुद्रसूरीश-शिष्य-वर्गे परस्परम्
विवादस्यास्पदं जज्ञे, सूरि-पदार्पणाय च ॥७२॥

ततो गुणप्रभाचार्य-संमत्या सकलोगणः ।
जेसलमेरुदुर्गेश-श्रीमालदेव राउलः ॥७३॥

कनिष्टमपि तच्छिष्य–मध्याज्ज्येष्ठं गुणैः पुनः ।
मुनिं सुमतिधीराख्यं, पदयोग्यं महोत्सवात् ॥७४॥

संवत्करेन्दु-षष्ठेन्दु-वर्षे भाद्रपदार्जुने ।
नवम्यां च गुरौ श्रेष्ठे, स्थापयामास तत्पदे ॥७५॥

त्रिभिर्विशेषकम्

श्रीजिनचंद्रसूर्याख्या, तस्याभवत्तदार्पितम् ।
सूरिमंत्रं पुनस्तस्मै, श्रीगुणप्रभसूरिणा ॥७६॥
श्रीजिनहंससूरीन्द्र-शिष्यैः श्रीपुण्यसागरैः ।
पाठकै र्गणियोगाश्च, विधिनास्य विधापिताः ॥७७॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तस्यामेव निशायां श्री–जिनमाणिक्यसूरिणा ।
प्रकटीभूय सूरिभ्यो, दर्शितमाम्नया सह ।।७८।।
समवसरण ग्रन्थै-क सूरि मंत्र-पत्रकम् ।
ततो भूतस्यसंवेग-वासना सहितं मनः ।।७९।। युग्मम्
जेसलमेरुदुर्गऽस्थ श्री जिनचंद्रसूरिणा ।
चतुर्मासी कृता संव-त्करेलांगेन्दु वत्सरे ।।८०।।
श्रावकधर्मनिष्ठस्य, वच्छावताख्य गोत्रिणः ।
श्री बीकानेर वास्तव्य–संग्रामसिंह मन्त्रिणः ।।८१।।
श्रीजिनचंद्रसूरिभ्यः प्रभूत मानपूर्वकम् ।
एकं विज्ञप्तिपत्रं ह्या-गन्तुमत्र समागतम् ।।८२।।
साधुभिः सह सूरीन्द्रा–स्ते चतुर्मास्यनन्तरम् ।
ततो विहृत्य संजग्मु. बींकानेर पुरं वरम् ।।८३।।
तत्रत्यश्रावकैः सार्द्धं, संग्रामसिंह-मंत्रिणा ।
तत्र प्रवेशिता रम्य-महामहेन सूरयः ।।८४।।
प्राचीनोपाश्रयं रुद्धं, शिथीलाचारित्र साधुभिः ।
दृष्ट्वा स्व वाजिशालायां, मंत्रिणोत्तारिताश्च ते ।।८५।।
तत्रैव संवदग्नीन्दु-रसेलाब्दे मुनीश्वराः ।
वर्षास्थितिं च तत्रत्य-श्राद्धाग्रहात्प्रचक्रिरे ।।८६।।
श्रीजिनचन्द्रसूरीन्द्र, एकदा परिभावयन् ।
भवस्वरूपमात्मीय-शिथीलत्वं विचारयन् ।।८७।।
समुद्धर्तुं निजात्मानं, गच्छं शैथील्यतः पुनः ।
निज परात्म-कल्याणं, विधातुमुत्सुको ऽभवत् ।।८८।। युग्मम्

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

ततः संवद्युगेलांग-चन्द्राब्दे चैत्रमेचके ।
सप्तम्यां मंत्रिणा द्रव्यव्ययान्महोत्सवे कृते ॥८९॥

ते चाभंगुरवैराग्यात्, षोडश साधुभिः समं ।
सर्वपरिग्रहं त्यक्त्वा, क्रियोद्धारं प्रचक्रिरे ॥९०॥ युग्मम्
चारित्रपालनाशक्ता, ये प्रसिद्धिं गता जने ।
मथेरणमहात्मेति, नामद्वयेन तेऽखिलाः ॥९१॥

तदा गच्छ व्यवस्थार्थं,-चारित्रपालनाय च ।
व्यवस्थापत्रमेकं तै, रचित्वा प्रकटीकृतम् ॥९२॥
द्वितीयापि चतुर्मासी, तत्रैव सूरिणा कृता ।
लाभं विज्ञाय तत्राभूद्बह्वी धर्मप्रभावना ॥९३॥

ततो विहृत्य सूरीन्द्रो, बाणेलांगेन्दुवत्सरे ।
महेवाख्य पुरे वर्षा स्थितिं चक्रे मुमुक्षुराट् ॥९४॥
सूरिणा वान्यकेनापि, तत्र षाण्मासिकं तपः ।
कृतं वाथ स शेषाष्ट-मासेषु विजहार कौ ॥९५॥
जेसलमेरु-दुर्गंग-चन्द्राङ्ग-भूमि-वत्सरे ।
वर्षावासं चकारासौ, श्रीजिनचन्द्रसद्गुरुः ॥९६॥
ततो विहृत्य सूरीन्द्रो, ययौ गूर्जरपत्तनम् ।
तदा तत्रत्य सुश्राद्धै, स्तत्प्रवेशोत्सवः कृतः ॥९७॥
श्री बीकानेर-निर्यातः, संघः शत्रुंजयं मुदा ।
प्रणम्य वलमानस्तान् ववन्दे पत्तनस्थितान् ॥९८॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

मुनीन्दुरसचन्द्राब्दे, श्रीजिनचन्द्रसूरयः।
गूर्जर पत्तने चक्रु, श्चतुर्मासीं जनाग्रहात् ॥९९॥

राजेश साह्यकबर-प्रतिबोधकस्य,
श्री जैन-शासन-समुन्नति-कारकस्य।
श्री मज्जगद्गुरु सवाइ-युगप्रधान-
भट्टारकस्य चरिते जिनचंद्रसूरेः ॥१००॥

इति श्री युगप्रधान सद्गुरु श्री जिनचंद्रसूरिचरिते
जन्म-दीक्षा-सूरिपद प्राप्ति वर्णात्मकः
प्रथम सर्गः समाप्तः ॥

—oo—

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ द्वितीयः सर्गः

इतश्च सागरोत्पत्ति रुपयोगितयोच्यते ।
ऋषिर्मेघाभिधः कश्चि ल्लुम्पकाख्यमते भवत् ॥१॥

सच बहुलकर्मीयो, दुर्जनः कलहप्रियः ।
बहिष्कृतोमतात्तस्मा-त्केनापि हेतुना पुनः ॥२॥

विजयदानसूरीणां, सोऽपि शिष्यो भवत्तदा
धर्मसागरनाम्नासौ, स्वगुर्वाज्ञां विराधयन् ॥३॥

स्वगच्छ यतिभिः सार्द्धं, विरोधयन् प्रखण्डयन् ।
बाढं चान्यतपा शाखा, जिनाज्ञा पालकान् गणान् ॥४॥

जिनाज्ञाकृत् सुचारित्रि—पूर्वसूरीन्कलङ्कयन् ।
मृषोत्सूत्रादि दोषेन, स्व शाखमेव पोषयन् ॥५॥

उत्सूत्रं कथयन्बाढं, निवारितः पुनः पुनः ।
विजयदानसूरीन्द्रै रुत्सूत्रादि-प्ररूपणात् ॥६॥

चतुर्भिः कुलकम्

सचबहुल कर्मित्वात्तथापि धर्मसागरः ।
मृषोत्सूत्रादितो नैव, विरमति कदाचन ॥७॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सर्वांस्तद्रचितान्ग्रन्थान्, यः कश्चिद्वाचयिष्यति ।
जिनाज्ञा-भंजकोऽसौ हि, गुरुद्रोही भविष्यति ॥८॥
पणं संघाय दत्वेति, रागद्वेष-प्रवर्द्धकान् ।
तान् जलशरणीचक्रु, ग्रंथान्सर्वांश्च सूरयः ॥६॥ युग्मम्
पुन-र्नंदासणीग्रामे, सूरिणा गूर्जरस्थिते ।
सभ्रामितः समारोप्य, रासभे धर्मसागरः ॥१०॥
स्वगणात्कर्षितश्चासौ विजयदानसूरिणा ।
तत्क्षणे यवनः कश्चिद् ग्रामाधीशो मृतोऽस्ति च॥११॥
गुर्वाज्ञयाथ बद्धोऽसौ, ग्रामेश यवनैरपि ।
बलात्कारेण तत्पार्श्वात्, घोरं प्रखानितं बहिः ॥१२॥
तद्दिनाद्यवनःकश्चित्तद् ग्रामे म्रियते यदा ।
खनयन्ति तदा तस्या-द्य यावच्छिष्यभक्तकाः ॥१३॥
सोथ तच्छिष्य भक्ताश्च, रासभा घोरखोदिया ।
इति नाम द्वयेनास्मिन्, जने ख्यातिं गता भृशम् ॥१४॥
तत उज्जयिनीं गत्वा, तत्र स धर्मसागरः ।
संसाध्य कालिकामंत्रं, सिद्धमन्त्रो भवत्कुधीः ॥१५॥
विजयदानसूरीन्द्रे, स्वर्गं गते निजे गणे ।
विजयहीरसूरीन्द्रै-रानीतो धर्मसागरः ॥१६॥
धर्मसागर आनीतः स्वमत्या हीरसूरिणा ।
ततो महान्विरोधो भून्निज गच्छे परस्परम् ॥१७॥
विजयदानसूरीणां पट्टे संस्थापितस्ततः
राजविजयसूरीन्द्रः कतिभिर्यतिभि-र्नवः ॥१८॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

रत्नविजयसूरिस्तत्पट्टे ततस्तपागणे ।
रत्नसूराख्य शाखा भूद्रत्नविजयसूरितः ॥१९॥
हीरविजय सूर्याज्ञांन मनुतेथ दुर्जनः ।
आकारितोपि नायाति, सूरिणां धर्मसागरः ॥२०॥
भापयति यतीन्सूर्याज्ञा कारणा गतांश्च सः ।
नाशयति निजस्थाना त्तान्स्ववशी करोति वा ॥२१॥
करोति कुधियासूरि-निषिद्धा-सत्प्ररूपणां ।
स एवमेव कुर्वन्ति, पुनस्तच्छिष्यका अपि ॥२२॥
स सागरः पुनर्मूढो-निह्नवत्वाद्बहिष्कृतः ।
स्वगणात्सूरिणा स्वान्या-सत्कर्मबन्ध कारणः ॥२३॥
विजयदानहीरादि-सूरीणां सागरेण वै ।
मिथ्यात्वाऽनंत संसारि-दुर्लभबोधितां कथि ॥२४॥

दर्शनविजय कृत विजयतिलकसूरिरासेप्रोक्तमिदं तत्पाठः

वलि उथाप्या एणइ बोलबार, गुरुनो भय नाण्यो लगार ।
वली विजयदानसूरि राय,तेहनइं मिथ्यावि कहाय ।१।
जगगुरु हीर जे जिन सम लहिओ, तेहनइं अनंतसंसारि कहिओ ।
वली अज्ञानी कह्यां कइ सूरि, पूर्व सूरि उथाप्यां भूरि ।२।
इत्यादि

नार ग्रामे पुनर्मूढै र्विषं वित्तीर्य सागरैः ।
धीरकमलपार्श्वाच्च मारिताः सेनसूरयः ॥२५॥

एवमुक्तरासे प्रोक्तमस्ति

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

विजयसेनसूरीन्द्रे, स्वर्गं गते कुसागराः ।
स्वगणे पुनरानीताः, स्वमत्या देवसूरिणा ॥२६॥
सागरा यतिभिः सार्द्धं, कुर्वन्ति कलहं सदा ।
तथापि देवसूरिस्त-त्पक्षं-नैव विमुञ्चति ॥२७॥
ततः श्रीसेनसूरीणां, पट्टे संस्थापितो नवः ।
कतिभिर्यतिभिः सूरि विजयतिलकाभिधः ॥२८॥
विजयानंदसूरि-स्त-त्पट्टे ततस्तपागणे ।
आणंदसूर-शाखाभू-द्विजयानंदसूरितः ॥२९॥
विजयतिलकाचार्यः सागर देवसूरिभिः ।
खर्यारोहण वह्न-यङ्क-दानपूर्वं विडम्बितः ॥३०॥
प्ररूपणा विचारादौ, निर्नामोपाधि रासभाः ।
एतच्छब्द त्रयेणोच्चैस्ते पूत्कुर्वन्ति तन्मतम् ॥३१॥

सागरिक कृत प्ररूपणा विचार पाठो यथा :—

श्रीमत्साहिसलीम-भूमिपतिना श्रुत्वा नवीना स्थिति-
रन्यान्येष्वसहिष्णुना वरचरादीदाभिधे पर्वणि ।
खर्यारोहणपूर्वकं कथनतः सूरित्वमुद्दालितं ।
गच्छो रासभिकोह्यसाविति जने प्राप प्रसिद्धिं ततः ।१।

पुनस्तत्रैवोक्तम् :—

पुनस्तत्पक्षोल्लाटे आग्नेय चिन्ह करणादिनाधिक्कृत्यं दूरीकृतः

इत्यादि

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तदपि सूरिपदं साहिना राजनगरमध्ये वालेयारोपणं पूर्वकं दूरीकृतं इत्यादि

तत आणंदसूरस्य पक्षीयै र्यतिभिः क्रुधात् ।
बंधयित्वोष्ट्रलांगूले, बाढं शृंखलपूर्वकम् ॥३२॥
आरभ्य स्तंभनाद्याव-त्पेटलादाभिधंपुरम् ।
यवन-पार्श्वतो देवसूरि र्घर्षायितो भृशम् ॥३३॥
यवनैरपि दण्डे द्वादशसहस्र रूप्यकान् ।
समादाय विमुक्तो ऽसौ, कारागृहाद्व्यथाकरात् ॥३४॥

आणंदसूरचार्चिकग्रन्थे यथा :—

अव्यक्तो भूत्कलौजैने, धर्मसागर निह्नवः ।
उंटघसेडिया शाखा, जाता तस्य कदाग्रहात् ॥१॥

पुन दर्शनविजय कृत विजयतिलकसूरि रासे द्वितीयाधिकारे प्युक्तं यथा :—

विजयदेवसूरि कीध प्रपंच, मेल तणो ते मांडयो संच ।
खंभनयरि ते कीध संकेत, आव्यां तिहां पणि न मिलिउं चित ॥१॥
विजयानंदसूरि फिरि आवीया, मरुमंडल भणी मनि भाविया ।
विजयदेव खंभाति रह्यां, लोक तेहना मति अति गहगहिया ॥२॥
चौमासुं तिहां रही पारणइं, चालणहार आव्यां बारणइं ।
वाटिं जाता तुरकी ग्रह्यां, उंट पुठे बांध्यइ वह्यां ॥३॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

पगिवेडी हाथे दसकला, एणीपरे दिवस गया केटला ।
करइ दंड मुकावइ तेह दुख दिट्ठउ अति तिहां नहि रेह ॥४॥

पेटलादि हाकिम एम कीध, बारहजार मुद्रा तेणे लीध ।
छुटा मरुमंडलि ते गया, तोहइ मनि उजल नही थया ॥५॥ इत्यादि

श्री देवसूरितो देव सूर-शाखा तपागणे ।
जाता पश्चात्पृथग्भूतैः सागरैः सागरी पुनः ॥३५॥
खण्डन-मण्डन ग्रथा-स्तद्रचितात्परस्परं ।
उत्सूत्रोत्पत्तिनामादि, ज्ञेयं मध्यस्थदृष्टिभिः ॥३६॥
स्वोत्सूत्राच्छादनायान्योत्सूत्र संस्थापने मिथः ।
न ते टलंति मूढाः का, कथान्योत्सूत्रि जल्पने ॥३७॥
श्री जिनचंद्रसूरीणां, वर्षास्थितिरभूद्यदा ।
तदानीं पत्तने धर्म-सागरस्यापि दुर्मतेः ॥३८॥
खरतर गणोद्योता-सहिष्णु धर्मसागरः ।
ईर्षया ज्वलमानोत्र, लोकानां पुरतो जगौ ॥३९॥
नवांगीवृत्ति कर्त्तारो, नैवखरतरे भवन् ।
अभयदेवसूरीन्द्रा, नात्रस्युरिदृशायतः ॥४०॥
अस्योत्पत्तिरभूद्वेदा-काश हस्तेन्दु वत्सरे ।
तेनोष्ट्रिक मतोत्सूत्र दीपी तत्व-तरंगिणी ॥४१॥
आदि ग्रन्थां श्चसंदर्भ्या-खिले जैने परस्परम् ।
विरोधो वर्द्धितो दूरी-कृता मैत्रीयभावना ॥४२॥ युग्मम् ॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

खरतर-गणाधीशा, अभयदेवसूरयः।
नाभवन्निति तत्प्राग् न, केनाप्यलेखि न श्रुतम् ॥४३॥
किन्तु समग्रगच्छीयै-रद्य यावन्मुनीश्वराः।
ते खरतरगच्छीया चार्यत्वे नैव मेनिरे ॥४४॥
अन्येषां का कथा किन्तु, तपागण स्थितैरपि।
प्रोक्ताः खरतराचार्य-त्वेन ते सूरयो वराः ॥४५॥

संवत् १५०३ तपागच्छीय सोमधर्म गणि विरचितोपदेश सप्ततौ यथा :—

'पुरा श्रीपत्तने राज्यं कुर्वाणे भीमभूपतौ।
अभूवन् भूतल ख्याताः श्रीजिनेश्वरसूरयः ॥१॥
सूरयोऽभयदेवाख्या-स्तेषां पट्टे दिदीपरे।
तेभ्यः प्रतिष्ठामापन्नो, गच्छः खरतराभिधः ॥२॥"

श्री वर्द्धमानसूरीन्द्रा दवच्छिन्न-परम्परा।
अस्त्यद्य यावदेकैव, सर्वग्रन्थ विलोकनात् ॥४६॥
तस्मादभयदेवाख्य, सूरिः खरतरे गणे।
प्रसिद्ध्यति स गच्छोऽपि तथापि धर्मसागरः ॥४७॥
स्व प्राग् परम्परायाश्च, स्व पाश्चात्यपरम्पराम्।
विभिन्नां कल्पितां ज्ञात्वा, स्वीय ग्रंथावलोकनात् ॥४८॥
निज परम्परां सत्यी—कर्तुं पर परम्पराम्।
मृषी कर्तुं स्वभक्तेषु ननर्द कलहप्रियः ॥४९॥ त्रिभिर्विशेषकम्

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तस्याप्यानुचिताक्षेपा-न्निराकर्तुं समुद्यतैः ।
श्रीजिनचन्द्रसूरीन्द्रै स्तद्वर्षे कार्तिकार्जुने ॥५०॥
चतुर्थ्यां सर्वगच्छीया-चार्य साधू विशारदान् ।
एकत्रीकृत्य संभूत्वा, सभामाकारितश्च सः ॥५१॥ युग्मम्
स धर्मसागरस्तत्र, नागतो गृहनर्दकः ।
किन्तु स्वोपाश्रयद्वारं, पिधाय तुष्णिकः स्थितः ॥५२॥
कार्त्तिक शुक्ल सप्तम्यां, शुक्रे जाता सभा पुनः ।
शास्त्रार्थं कर्तुमाचार्यैं, राह्वास्तो धर्मसागरः ॥५३॥
तथापि नागतो सोथ, श्री जिनचंद्रसूरिभिः ।
अभयदेवसूरीन्द्रा, नवाङ्गीवृत्तिकारकाः ॥५४॥
स्तंभनापार्श्वबिम्बस्य, प्रकटीकारका गणे ।
जाताः कस्मिन्निति प्रश्नः कृतस्तस्यां सुसंसदि ॥५५॥ युग्मम्
सुप्राचीनैकचत्वारिंशद्ग्रन्थानां प्रमाणतः ।
निर्णयीकृत्यतै सभ्यैः प्रोक्तं मध्यस्थ दृष्टिभिः ॥५६॥
खरतर गणे पूज्या स्तेऽभयदेवसूरयः ।
संजाताः संति पूर्वोक्त-विशेषण द्वया युताः ॥५७॥
उत्सूत्रभाषिता सत्य-भाषितनिह्नवत्वतः ।
जैनाद्बहिष्कृतो धर्म-सागरो निह्नवाग्रणिः ॥५८॥
पुनः कार्त्तिक-शुक्लस्य, त्रयोदश्यां सभा जनि ।
स्व स्व मतानि दत्तानि, तैः सभ्यैर्लेखितानि वै ॥५९॥
ग्रन्थ विस्तर भीत्यात्र, लिख्यते तानि नो पुनः ।
अस्योत्सूत्राणि दर्श्यन्ते, केवलं हितलिप्सया ॥६०॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

युगादिश्रावणाश्वेताद्य तिथेर्जायते पुनः ।
द्वाषष्टितम द्वाषष्टि-तमतिथिक्षयो भवेत् ॥६१॥
एतत्सूर्यप्रज्ञप्त्यादि, वाक्येन श्रीजिनादिभिः ।
दर्शितःसारणी पूर्वं, पर्वापर्व-तिथिक्षयः ॥६२॥
तथापि सागरा मूढा, जैने पर्व-तिथिक्षयः ।
न भवतीति जल्पन्ति, तदुत्सूत्रंहि तन्मते ॥६३॥
पर्वापर्वतिथेर्वृद्धि-र्जैने पुन र्न जायते ।
तथापि सागरा मूढा, वदंत्यत्र स्वकल्पितम् ॥६४॥
जैने पर्व तिथे र्वृद्धि र्न जायते कदाचन ।
किन्त्वपर्व तिथेश्चैत-दुत्सूत्रं सागरी मते ॥६५॥
जैन टिप्पण-विच्छेदं, विसंवादादि कारणैः ।
पूर्वाचार्यै र्विधाय स्वीचक्रे लौकिक टिप्पणम् ॥६६॥
टिप्पणमद्य यावत्त त्प्रचलत्यत्र शासने ।
तत्र सर्व तिथीनांहि वृद्धिर्हानि प्रजायते ॥६७॥
प्रोक्ता धार्मिककार्येषु, सूर्योदयतिथिः पुनः ।
प्राचीन सूरिभि र्नान्योदयहीना तिथिः परा ॥६८॥
पूर्णिमा मावसी वृद्धौ, प्रत्यक्षं प्रथमा तिथौ ।
ग्रहणं चन्द्रसूर्यस्य, भवति नोत्तरा तिथौ ॥६९॥
सिद्ध्यत्याद्यतिथिस्तस्मा-द्विराधयन्ति सागराः ।
तथाप्याद्यतिथिं मूढा, स्तदुत्सूत्रंहि तन्मते ॥७०॥
पूर्णिमा मावसी पाते, कृत्वा राकाममावसीं ।
चतुर्दश्यास्त्रयोदश्याः कुर्वन्त्यज्ञा श्चतुर्दशीम् ॥७१॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

द्वितीयादिक्षयेप्येवं, ज्ञ याकल्याणकी तिथिः ।
त्यक्तोदयां तमस्तस्वी-कारादुत्सूत्र मस्यहि ।।७२।।
पूर्णिमा मावसी वृद्धौ, तत्प्राग्तिथेश्चतुर्दशीम् ।
कुर्वन्त्यज्ञा द्वितीयादि-वृद्धौ कल्याणकीतिथिम् ।।७३।।
उदयास्त प्रहीनत्वा, न्मुख्य तिथि विराधनात् ।
व्रत भङ्गादि भागित्वा, दुत्सूत्रं सागरी मते ।।७४।।
मोहाच्छादित चेतस्का, गृहीत व्रतपालनात् ।
आराधयन्ति ते वर्षै-कादश शुक्ल पंचमीम् ।।७५।।
अनादि काल ससिद्धा, महापर्वोत्तमा पुनः ।
अस्ति सर्वत्र विख्याता, भाद्रस्य शुक्ल पञ्चमी ।।७६।।
अशुद्धत्रिकयोगेन, गृहीत व्रत भञ्जनात् ।
विराधयन्तितेतांत दुत्सूत्रं सागरी मते ।।७७।।
व्रतभङ्ग मृषावादि त्वात्तिथीनामितस्ततः ।
करणादेतदुत्सूत्रं. प्रत्यक्षं दृश्यतेऽत्रहि ।।७८।।
जिनैःसूर्यप्रज्ञप्त्यादौ, द्वाषष्टि पूर्णिमायुगे ।
द्वाषष्ट्य मावसी प्रोक्ता, द्वाषष्टि चन्द्रमासकाः ।।७९।।
तथापि मन्यते षष्टि-पूर्णिमा षष्ट्य मावसी ।
राकादि द्विनिषिधेनोत्सूत्र द्वयंहि रासभे ।।८०।।
मन्यन्ते सागरैः षष्टि-चन्द्रमासास्तथापि तैः ।
मास द्वय निषेधेन, तदुत्सूत्रंहि तन्मते ।।८१।।
प्रज्ञप्त मुक्त सूत्रादौ, चतुर्विंशोत्तरं शतम् ।
पक्षानां पञ्चवर्षीय युगस्य सर्वदर्शिभिः ।।८२।।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

मन्यन्ते सागरैरेक शत विंशतिपक्षकाः ।
चतुः पक्ष निषेधेन, तदुत्सूत्रंहि तन्मते ॥८३॥
प्रज्ञप्तान्युक्त सूत्रादौ, युगस्यैकस्य तीर्थपैः ।
अष्टादश शतत्रिंश-दहोरात्राणि शंकरैः ॥८४॥
तथापि मन्यते चाष्टा-दशशतं कुसागरैः ।
तेषां त्रिंशन्निषेधेन, तदुत्सूत्रंहि तन्मते ॥८५॥
प्रज्ञप्ता उक्त सूत्रादौ पञ्चहायनिके युगे ।
अष्टादश शत षष्टि-तिथयः सर्वदर्शिभिः ॥८६॥
तथापि मन्यते चाष्टा-दशशतं कुसागरैः ।
तासां षष्टि निषेधेन, तदुत्सूत्रंहि तन्मते ॥८७॥
जिनेन्द्रै रुक्त सूत्रादौ मासा राका स्त्रयोदश ।
पक्ष षड्विंशतिः प्रोक्ताः सम्वत्सरेभिवर्द्धिते ॥८८॥
तै र्मन्यन्ते तथापि द्वादश मासाः कदाग्रहात् ।
एक मास निषेधेन, तदुत्सूत्रंहि तन्मते ॥८९॥
मन्यन्ते मावसीनां द्वा-दश द्वादश पूर्णिमाः ।
राकाद्येक निषेधेनो तदुत्सूत्रंहि तन्मते ॥९०॥
मन्यन्ते पुन रज्ञैस्तै-श्चतुर्विंशति पक्षकाः ।
पक्ष द्वय निषेधेन, तदुत्सूत्रंहि तन्मते ॥९१॥
जिनैः प्रोक्तोक्त सूत्रादौ, त्रिशत नवती तिथिः ।
वन्हि गजाग्न्यहोरात्रं, संवत्सरेभिवर्द्धिते ॥९२॥
तथापि तिथ्यहोरात्र-षष्ठ्युत्तरशतत्रयं ।
मन्यते सागरैस्तैस्त-दुत्सूत्र द्वय मत्रहि ॥९३॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

युज्यते ह्यु क्त सूत्रेण वक्तुं मास त्रयोदश ।
त्रयोदशक मासात्म सांवत्सर प्रतिक्रमे ॥९४॥
तथापि न वदन्त्यज्ञा, स्तत्पाठस्तत्प्रतिक्रमे ।
किन्तु द्वादशमासांश्च तदुत्सूत्रं हि तन्मते ॥९५॥
निशीथ चूर्णिकारादि प्राचीन सूरयः पुनः ।
षड्विध चूलिका भंगी चक्रुर्दत्वा वरोपमाम् ॥९६॥
तत्राख्य स्थापने क्षुन्ने, विज्ञ`या द्रव्यचूलिका ।
सर्व विदां शरीरादि क्षेत्रचूला नगादयः ॥९७॥
विज्ञ`याधिक मासाधि-वर्षादि कालचूलिका ।
जिनेन्द्र केवलज्ञानि-प्रभृति भावचूलिका ॥९८॥
षड्विधचूलिका मध्या न्नस्वीकुर्वन्ति सागराः ।
कालचूलां हठेनैव, तदुत्सूत्रंहितन्मते ॥९९॥
द्वितीयोधिक मासोहि, कालचूलाप्रजायते ।
परन्तु सागरैरन्ते, कालचूला न मन्यते ॥१००॥
स्वाभाविकाद्यमासस्य, कालचूलावदन्ति ते ।
एतत्सूत्र विरुद्धत्वा—त्तदुत्सूत्रं हि तन्मते ॥१०१॥
पुरा भवद्गृहि ज्ञात—पर्यु षणाभिवर्द्धिते ।
वृहत्कल्प निशीथादि—निर्यु क्त्याद्यनुसारतः ॥१०२॥
विंशति रात्रिके याते, चातुर्मासि प्रतिक्रमात् ।
पंचाशतीतिचन्द्राब्दे, वार्षिकपर्वपूर्वकम् ॥१०३॥ युग्मम् ॥
मन्यते तै र्गृहि ज्ञात—पर्यू षणाभिवर्द्धिते ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

वार्षिक पर्व हीनातो, तदुत्सूत्रंहि तन्मते ॥१०४॥
समवायादि सूत्रोक्त –चान्द्रपाठोऽभिवर्द्धिते ।
पुरो विधीयते मूढै स्तदुत्सूत्रं हि तन्मते ॥१०५॥
सूत्रादौ सा गृहि ज्ञाता, पर्यूषणा प्रकीर्त्तिता ।
दिवस प्रतिबद्धाहि. न मास प्रतिबद्धिका ॥१०६॥
तथापिमन्यते मास––प्रतिबद्धान्य पर्ववत् ।
सागरै र्दिन बद्धा न, जिन सिद्धान्त सम्मता ॥१०७॥
यदि सा मास बद्धास्या, त्तदा कालिकसूरयः ।
पंचमी तश्चतुर्थ्यां तां, नानयिष्यत्कदाचन ॥१०८॥
केपिनाखण्डयिष्यन्तां, कल्याणकादि पर्ववत् ।
सातोस्ति दिन बद्धात, स्तदुत्सूत्रं हि तन्मते ॥१०९॥
अभिवर्द्धित वर्षेस्यु, श्चातुर्मासी प्रतिक्रमात् ।
विंशति रात्रयो याव, च्छ्रावण शुक्लपंचमीम् ॥११०॥
जायन्ते तन्मते याव द्भाद्र धवल पंचमीम् ।
पञ्चाशद्रात्रयस्तस्मा, त्तदुत्सूत्रं हि तन्मते ॥१११॥
जैन टिप्पन विच्छिन्नत्त्या, स्वीकृत्य लौक टिप्पनम् ।
तत्र पूर्वधरैः सर्व-मासवृद्धि प्रदर्शनात् ॥११२॥
चान्द्रेभिवर्द्धिते चातु-र्मास्या पञ्चाशता दिनैः ।
वार्षिक कृत्य पूर्वं सा, गृहिज्ञाता प्रतिष्ठिता ॥११३॥
द्वितीय श्रावणस्याद्य–भाद्रस्य शुक्ल पञ्चमीम् ।
यावद्भवन्ति पञ्चाश-हिनानि तत्प्रतिक्रमात् ॥११४॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

जायन्ते तन्मतेऽशीति-दिनानि भाद्र मासि च ।
द्वितीयभाद्रमासि प्राग्-रीत्योत्सूत्रं ततोस्ति तत् ॥११५॥
देवानन्दोदराज्ज्ञात्वा, त्रिशला कुक्षिमोचनम् ।
प्रभोः प्रोक्तेति गर्भाप-हार व्युत्पत्ति रागमे ॥११६॥
पुनः श्रीकल्पसूत्रादौ, वीरगर्भापहारकः ।
भ तिथि मास कालादि-निर्णयो निर्जराकरः ॥११७॥
स्वप्न दर्शन पृच्छास्व-धान्यादि वृद्धि पूर्वकम् ।
च्यवन मिव सर्वत्र, कल्याणक तया कथि ॥११८॥ युग्मम् ॥
जम्बूद्वीपोक्त राज्याभि-षेकपाठेन सागराः ।
एकोडुसूचकेनाधि-करण कर्म वृद्धिना ॥११९॥
पञ्चाशकोक्त सामान्य-सर्वार्हद्भद्र पाठतः ।
खण्डयन्ति विशेषं तं, पाठमुत्सूत्रमत्र तत् ॥१२०॥ युग्मम् ॥
कल्पादौ भद्रबाह्वादि श्रुतकेवलिभिः पुनः ।
उच्चैर्गोत्रोदयानिंद्य-श्लाघ्य कल्याणतादिभिः ॥१२१॥
प्रभो र्निष्क्रमणं नीचै-र्गोत्र विभुक्त्यनन्तरम् ।
देवानन्दोदरात्प्रोक्तं, त्रिशला कुक्षि मोचनम् ॥१२२॥ युग्मम् ॥
तथापि सागरैर्गर्भा-पहारो मन्यते प्रभोः ।
पूर्वोक्त वैपरीत्येन, तदुत्सूत्रंहि तन्मते ॥१२३॥
विप्रकुलोद्भवाद्याश्च-र्यानां कल्याणकानि च ।
मन्यन्ते तं विनाज्ञैस्तै, स्तदुत्सूत्रं हि तन्मते ॥१२४॥
जिनदत्तौ र्निषिद्धास्ति, सर्वर्थार्चा जिनेशितुः ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सर्वस्त्रीभ्य इति द्वेषा-द्वदन्ति सागराः पुनः ॥१२५॥
पूर्वाचार्यैर्न्यषेध्यर्ह-न्मूलबिम्बाङ्ग पूजनम् ।
स्त्रियो कालतुर्धर्मिण्याः परन्तु नाग्र पूजनम् ॥१२६॥
तथापि सागरा द्वेषा, त्कारयंत्यङ्ग पूजनम् ।
पुष्पवत्यः स्त्रियः पार्श्वा-दुत्सूत्र द्वय मत्र तत् ॥१२७॥
श्रीव्यवहार वृत्युक्तं, जन्म मरण सूतकम् ।
सागरै मन्यते नैव तदुत्सूत्रंहि तन्मते ॥१२८॥
वेश्यायानर्त्तनं चैत्ये, पूर्वाचार्य निषेधितम् ।
कारयन्ति तथाप्येते, तदुत्सूत्रंहि तन्मते ॥१२९॥
गच्छाचार निशीथादौ, साध्वीभिः सह सर्वथा ।
तीर्थङ्करै र्यतीनां हि, विचरणं निषेधितम् ॥१३०॥
तन्मते साधु साध्वीनां, समं विचरणं सदा ।
ता निःशीला विना साधून्, ग्रामान्तरं प्रयान्ति याः ॥१३१॥
जिन शिष्टि विरुद्धोप-देशत्वाचरणात्वतः ।
साध्वी कलङ्क दाने नो, त्सूत्र द्वयं हि तन्मते ॥१३२॥
ग्रामैक पुर पञ्चाहं यावन्मासं प्रतिष्ठनम् ।
योग्य क्षेत्रो चतुर्मासी-करणं च क्रमागते ॥१३३॥
अन्यथा पञ्चक वृद्धि-करणमुक्तमागमे ।
तन्मास कल्प मर्यादा हानिं दृष्ट्वाप्तसूरिभिः ॥१३४॥
आचरणा गतो मास-कल्पोस्थायीति कीर्त्तितम् ।
श्रीव्यवहार भाष्यादौ, स्वीकृतोऽखिलसूरिभिः ॥१३५॥ युग्मम् ॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र द्वि त्रि चतुर्मासान्, चतुर्मासी द्वय त्रयम् ।
एक स्थाने प्रकुर्वन्ति, सागराः कारणं विना ॥१३६॥
अन्तराल गत ग्रामान्, मुक्त्वा क्षेत्रं निजेच्छितं ।
यान्ति तथापि जल्पन्त्या-गमोक्त मास कल्पकम् ॥१३७॥
आचरणा गतं मास-कल्पं खण्डयन्ति ते ।
न जल्पन्ति द्वय भ्रष्टा, स्तदुत्सूत्रं हि तन्मते ॥१३८॥
सूत्रादौ पौषधः प्रोक्तो ऽर्हत्कल्याणक पर्वसु ।
चतुर्दश्यष्टमी राका-मावस्याष्टाह्निकादिषु ॥१३९॥
आहार देह सत्कार-व्यापाराब्रह्म वर्जने ।
आरूढः पौषधोऽष्टम्या-दि पर्वसूपवासके ॥१४०॥
एतत्पौषध शब्दार्थ-त्रयं शास्त्रेषु कीर्त्तितम् ।
सच नाचरणीयोऽस्ति, प्रत्यहं किन्तु पर्वणि ॥१४१॥
सिद्ध्यति पौषधस्तस्मा, त्पर्वसु पौषधे पुनः ।
उपवासो कथि प्राज्ञै, स्त्रिवारं देववन्दनम् ॥१४२॥
तत्र प्रतिक्रमणान्त र्गत द्वयं विधीयते ।
पुनः पौषधिकैरेकं, मध्यान्हे देववन्दनम् ॥१४३॥
तथापि स्थापयंत्यज्ञा, अपर्व पौषधः पुनः ।
पोषधे भोजनं पञ्च वारं च देववन्दनम् ॥१४४॥
श्री आवश्यक टीकोक्त पाठापवर्त्तनं पुनः ।
विज्ञेयमेतदुत्सूत्र-चतुष्टयं हि तन्मते ॥१४५॥
प्रोक्तं सामायिकोत्कृष्ट-कालयामाष्टकं पुनः ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सामायिक जघन्यैक-मुहूर्त्तं च जिनागमे ॥१४६॥
तस्मात्पूर्वं रजन्याश्चा-वशिष्ट घटिकाद्वये ।
श्रावकेनादृतो येना-ष्टप्रहरिक पौषधः ॥१४७॥
युज्यते परत्रात्रस्या-वशिष्ट घटिका द्वये ।
तस्याष्टयाम पूर्णत्त्वा,-ल्लातुं सामायिकं पुनः ॥१४८॥
सूर्योदय क्षणे येन, गृहीत पौषधः पुनः ।
तत्काल परिपूर्णत्वा, ल्लातुं तन्नास्य युज्यते ॥१४९॥
गुरुगम विहीनास्ते, निषेधयन्ति सागराः ।
पूर्वोक्ताप्त वचस्तस्मा, दुत्सूत्रं सागरी मते ॥१५०॥
पूर्वं सामायिकं लात्वा, पश्चादीर्यापथी पुनः ।
आवश्यक बृहद्वृत्त्या-दिशास्त्रेषु प्रकीर्त्तिता ॥१५१॥
पूर्वमीर्यापथींकृत्वा, लांति सामायिकं ततः ।
तन्मते शास्त्र बाह्यत्वा, दुत्सूत्रं भव वर्द्धकम् ॥१५२॥
महानिशीथ सूत्रोक्त-प्रमाणमर्पयन्ति ते ।
अत्र श्रीहरिभद्राद्यै-स्तस्मिन् दृष्टि पथा गते ॥१५३॥
पूर्वं सामायिकं लात्वे-र्यापथीकथिता ततः ।
तस्माद्विशेष सूत्रत्वा त्पश्चादीर्याऽत्र सिद्ध्यति ॥१५४॥ युग्मम् ॥
तद्दंडके पुनः पूर्वं, सावद्य योग वर्जनम् ।
पश्चादालोचना प्रोक्ता, ततोऽपि साप्रसिद्ध्यति ॥१५५॥
शास्त्रे सामायिकोच्चार-त्रिवार मात्र सूरिभिः ।
कथितं त्रिनमस्कार-पूर्वकं तन्निषेधनम् ॥१५६॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वाध्यायाष्ट नमस्कार-गुणन प्रनिषेधनम् ।
सामायिके विनादेशं, वस्त्रादि ग्रहणं पुनः ॥१५७॥
सामायिके विनादेशं, मुपवेसन मासने ।
चरवलं विनातस्मि न्नुत्तिष्टन निषेधनम् ॥१५८॥
मनःकल्पित पाक्ष्यादि-देववन्दन माग्रहात् ।
एतदुत्सूत्र षट्कं हि, विज्ञेयं सागरीमते ॥१५९॥
कथितं पुनराचाम्लै-काशनादि वदागमे ।
सदैकै कोपवासानां, प्रत्याख्यान विधापनम् ॥१६०॥
कोटि युक्तं पुनः शास्त्रे, प्रत्याख्यानं प्रकीर्त्तितम् ।
उपवास समुच्चारा, त्सदैवैकाशनादि वत् ॥१६१॥
संज्ञा वाचक शास्त्रोक्त-षष्ठाष्टमादि पाठतः ।
ते तन्निषेधयंत्यज्ञा, स्तदुत्सूत्रं हि तन्मते ॥१६२॥
साधूभ्यः पुनराचाम्लो-पवासै काशनादिषु ।
पानकोच्चारणं शास्त्रे, प्रोक्तं न श्रावकाय तत् ॥१६३॥
तथाप्या ज्ञापयंत्यज्ञाः, श्राद्धेभ्यः पानकं पुनः ।
मुत्कल श्राद्ध साधुभ्य, उत्सूत्र द्वय मत्र तत् ॥१६४॥
सिद्धान्ते त्रिविधाहार-प्रत्याख्याने निषेधितम् ।
सच्चित्त जलपानस्यो-पवासै काशनादि वत् ॥१६५॥
तथापि तन्मतेश्राद्ध-सच्चित्त जल पीबनम् ।
रात्रिक त्रिविधाहारे, तदुत्सूत्रं हि सागरे ॥१६६॥
शास्त्रे चतुर्विधाहार-मध्यादाचाम्लके कथि ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अन्न जल द्वय द्रव्य, मुत्कृष्ट द्रव्य हीनकम् ॥१६७॥
तथापि तक्र राद्धान्नं शुंठ्यादि स्वादिमं च ते।
गृह्णंति देशयंत्यज्ञा-स्तदुत्सूत्रं हि तन्मते ॥१६८॥
दुग्धादि विकृतिं नामां-तरं विधाय सागराः।
लांति निर्विकृतौ शास्त्रा-नुक्ता मुत्सूत्र मत्रतत् ॥१६९॥
तीर्थोद्गार प्रकीर्णादौ, पूर्वधरैः प्रकीर्त्तितः।
श्रावक प्रतिमोच्छेदो, भिक्षुक प्रतिमा इव ॥१७०॥
तथाप्युद्वाहयंत्यज्ञाः, श्रावक प्रतिमा हठात्।
श्राद्ध पार्श्वात्ततो ज्ञेयं, तदुत्सूत्रं हि तन्मते ॥१७१॥
पुनः संघपतौ माला-रोपणं सूरिकं विना।
बिंबाञ्जनशलाकापि, भवेन्नहि जिनेशितुः ॥१७२॥
सागरास्तु विनासूरिं, कुर्वन्ति तद्द्वयं पुनः।
साधुप्रधान माप्रोक्त-मज्ञानिषेधयन्ति ते। १७३॥
या पर्युषित वल्लादि-द्विदला पूपिकायतेः।
सूत्रोक्त कल्पनीयास्ति, तथापि तन्निषेधनम् ॥१७४॥
बबूल संगरादीनां, द्विदलत्व निषेधनम्।
पुन र्द्विदल सम्पर्का-मदुग्धाभक्ष्य माननम् ॥१७५॥
श्रुतदेव्याः पुनः कायो-त्सर्गं कुर्वन्ति ते निशं।
तथापि पाक्षिकादौह्य-करणं तस्य तन्मते ॥१७६॥
आयरिय उवज्झाए-पाठस्य पठनं यतेः।
अड्ढाइज्जेसु पाठस्य, श्राद्धानां पठनं पुनः ॥१७७॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

उग्घाडा पोरिसी शास्त्रे, प्रोक्ता तथापि तन्मते ।
हठाद्ग्रहु पडिपुन्ना-पोरिसी कथनं पुनः ॥१७८॥
मनः कल्पित पन्यास-पदस्यस्थापनं पुनः ।
दीक्षादौ स्थापनं नंद्या, जिनाद्याह्वानकं विना ॥१७६॥
श्रीजयवीयरायस्यो क्तं गाथाद्वय मागमे ।
तथापि पञ्चगाथानां,पठनं निजकल्पितम् ॥१८०॥
श्रीजयवीयरायस्यो-च्चारणे मस्तकाञ्जलेः ।
स्त्रीभ्यो निषेधनं तस्मा, त्तदुत्सूत्र चतुर्दश ॥१८१॥
झोलीं विनोष्ण नीरस्या-नयनं दीप रक्षणम् ।
स्वगार्श्वेजीव हानित्वा-दुत्सूत्र द्वयमत्रतत् ॥१८२॥
अन्यतीर्थि गृहीतार्ह-न्मूर्तिपूजन वन्दनम् ।
यत्तद्धिकथ्यते लोको-त्तरमिथ्यात्व मागमे ॥१८३॥
तथापि केशरीयादि-जिनोपयाचनोच्यते ।
तैर्लोकोत्तर मिथ्यात्व-तयोत्सूत्रमत्रतत् ॥१८४॥
तत्कालीनैश्च देवेन्द्र क्षेमकीर्त्यादि सूरिभिः
श्रीजगच्चन्द्र सूरेश्च, चैत्रवालगणो कथि ॥१८५॥
तैर्जगच्चन्द्र देवेन्द्र-विजयचन्द्र सूरयः
स्वग्रन्थे देवभद्रोपा-ध्यायशिष्याः प्रकीर्त्तिताः १८६॥
मुनिसुन्दरसूर्यादि-पाश्चात्यैः स्वपट्टावलौ ।
श्रीजगच्चन्द्र सूरेश्च, प्रकल्पितस्तपागणः ॥१८७॥
श्रीदेवभद्र देवेन्द्र-विजयचन्द्रसूरयः

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

कल्पितास्तस्य शिष्यास्तै. स्तदुत्सूत्रं हि तन्मते ॥१८८॥
इत्यादीनि प्रभूतान्य-पराणि सागरी मते ।
संत्युत्सूत्राणि नोच्यन्ते. तथापिग्रन्थ विस्तरात् ॥१८६॥
धर्मसागर वालेयो-क्तं तपागण सूरिभिः ।
अष्टोत्तर शतोत्सूत्रं, स्वग्रन्थेषु प्रदर्शितम् ॥१६०॥

राजेश साह्यकबर प्रतिबोधकस्य
श्रीजैनशासन समुन्नति कारकस्य
श्रीमज्जगद्गुरु सवाइ युगप्रधान
भट्टारकस्य चरिते जिनचन्द्रसूरेः ॥१६१॥

इति युगप्रधान सद्गुरु श्रीजिनचन्द्रसूरि चरिते
सागर मतोत्पत्ति तन्मतोत्सूत्र प्रदर्शकात्मको
द्वितीयः सर्गः समाप्तः ॥

अथ तृतीय सर्गः

श्रीस्तम्भन द्रङ्गनिवासिवच्छ-राजात्मजः श्रावकसंघ मुख्यः ।
समेत्यभक्तः सुगुरोश्चकर्मा-साहोव वन्दे जिनचन्द्रसूरिः ॥१॥
श्रीस्तम्भनं पावयितुं मुनोश-सूरीन्द्र विज्ञप्तिरकारितेन ।
पवित्रयन्तोवसुधातलंते, समाययुस्तत्र सुखं सुखेन ॥२॥
सहस्रशः श्राद्धजनाः समेत्य, तदाभिमुख्यं सुगुरून्प्रणेमुः ।
सुश्राद्ध श्रृंगारित मार्गसंस्थ-स्वस्वापण श्रेणिभिरायताभिः ॥३॥
अलंकृतैकद्वि चतुस्तुरङ्ग-भ्राजिष्णु सत्पुष्प रथावरूढैः

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

वाजित्र नादैर्मुदितैर्विचित्रा-लंकारवेषैर्लघु बालकैश्च ।।४।।
रथंरथंच प्रतिवर्त्तमानै, रेकैक दिव्यध्वनि तुर्यवृन्दैः ।
प्रवाद्यमानैर्जय शब्दवादि-सद्याचकाद्यैः पुररीर्यमाणैः ।।५।।
मरुस्थली मालव गुर्जरादि-देशोद्भवैः श्राद्धजनैः प्रभूतैः ।
पृष्टानुयातै र्जय शब्दकान्यं-तरांतरासं कथयद्भि रुच्चैः ।।६।।
नेपथ्य मुक्ताफल रत्नचामी-कराद्यलंकार विभूषिताभिः ।
सुश्राविकाभिः सुगुरोर्गुणौघान्, गायन्तिकाभि र्मधुरस्वरेण ।।७।।
मुक्ताफल स्वस्तिक चारुनन्दा-वर्त्तानि हर्षात्क्रियमाणिकाभिः ।
स्थानं प्रतिस्व स्वकमग्रतोहि,श्रीचंद्रसूरेः सधवाबलाभिः ।।८।।
मध्ये सशिष्यै र्गुरुभि र्मनोज्ञं, तत्रस्थ लोकाः सकला अपूर्वम् ।
गुरोः प्रवेशोत्सव मादरेण, विलोक्यचित्ते तुल हर्ष मापुः ।।९।।
षड्भिः कुलकम् ।।

संवद्गजेला रस चन्द्र वर्षे, श्राद्धाग्रहात्तत्र गुरुश्चकार ।
वर्षा स्थितिं लाभ मवेत्य जैन-धर्मोन्नतिस्तत्र बभूवबह्वी ।।१०।।
धर्मोपदेशं सुगुरो र्निशम्य, तत्र प्रबुद्धा ल्लु रिद्ध भावाः ।
केचिज्जना द्वादश सुव्रतानि, केचित्पुनर्भागवतीं च दीक्षाम् ।।११।।
पुनर्जिनेन्द्र प्रतिमा प्रतिष्ठा, कृता ततः श्री गुरवो विहृत्य ।
संवत्खगेलारस चन्द्र वर्षे, श्राद्धाकुलं राजपुरं प्रजग्मुः ।।१२।।

इत एको द्विजो विद्वान्, स्वमस्तक धृताङ्कुशः ।
स्वोदर बद्ध पट्टश्च, सर्व विद्याभिमानतः ।।१३।।
एकस्य जल भृत्कुम्भं, धारयन् तृण पूलकम् ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

मस्तके न्यस्य भृत्यस्य, भ्रमति स्मात्र पुर्वरे ॥१४॥ युग्मम् ॥
स सत्यवादिनानीतः 'सारङ्गधर' मन्त्रिणा ।
गुरोः पार्श्वं चकाराथ, सवादं यतिभिः समम् ॥१५॥
वादेथ स्वाजयं ज्ञात्वा, स समस्यां जगौ यथा ।
"मक्षिका पाद घातेन, कम्पितं जगतस्त्रयम्" ॥१६॥
समभित्तौ लिखितं चित्रं, वारिणा कुण्ड पूरितम् ।
मक्षिका पाद घातेन, कम्पितं जगतस्त्रयम् ॥१७॥
इति गुरो र्मुखात्पूर्त्तिं, समस्याया निशम्य सः ।
अवगम्य जयं सूरे, र्निर्मदः सन्न नामतं ॥१८॥
ततो विहृत्या थ गुरु र्जगाम, श्रीपत्तनं गूर्जर देश संस्थम् ।
संवत्खगोला रस चन्द्रवर्षे, वर्षास्थितिं तत्रचकार पूज्यः ॥१९॥
संवन्नभो हस्त रसेन्दु वर्षे, मरु स्थितायां विसलाख्य पुर्याम् ।
श्राद्धाग्रहाल्लाभ मवेत्यचारुः वर्षास्थितिं श्रीसुगुरुश्चकार ॥२०॥
संग्रामसिंहादि जनाग्रहेण, संवद्धरा हस्त रसेन्दु वर्षे
गुरु र्विकानेर पुरे चकार, वर्षा स्थितिं श्रीजिनचन्द्रसूरिः ॥२१॥
संवत्कर कराङ्केन्दु-वर्षे वैशाख शुक्लके ।
तृतीयायां विधौतत्र, श्रीजिनचन्द्रसूरिणा ॥२२॥
सुपार्श्व पञ्चतीर्थीय-धातु बिम्बं प्रतिष्ठितम् ।
राखेचा गोत्र सा भिम्बा-मादू मेघादि कारितम् ॥२३॥
युग्मम् ॥
संवत्कराक्ष्यङ्क शशाङ्क वर्षे, वर्षा स्थितिं जेसलमेरु दुर्गे ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

ततो विकानेर पुरे करोत्स, संवद्गुणाक्ष्यङ्ग शशाङ्क वर्षे ॥२४॥

इतः खेतासर ग्रामे, चोपडा गोत्रि चांपसी ।
तस्य चांपलदेभार्या, मानसिंहस्तयोः सुतः ॥२५॥
स मार्गशीर्ष कृष्णस्य, पञ्चम्यां चन्द्रसूरिणा ।
गुरुणा दीक्षितोस्याख्या, महिमराज इत्यभूत् ॥२६॥
नादोलाइ पुरे वेद-हस्ताङ्ग चन्द्र वत्सरे ।
श्राद्धाग्रहा च्चतुर्मासी, विहिता चन्द्रसूरिणा ॥२७॥
तत्र कार्त्तिक शुक्लस्य, दशम्यां निकषागताम् ।
मुगल वाहिनीं श्रुत्वा, महात्रास विधायिनीम् ॥२८॥
मारण ताडन द्रव्य-हरणादि भय द्रुताः ।
तद् ग्राम वासिनो लोका, दिशो दिशं पलायिताः ॥२९॥
तदोक्तं सर्व संघेन, गन्तु मन्यत्र सूरये ।
तथापि गुरवो ध्याने, तस्थु स्तत्रैव निर्भयाः ॥३०॥
गुरुध्यान प्रभावात्तन्मार्ग भ्रष्टा पराध्वनि ।
पतिता सागतान्यत्र, तदा प्रहर्षिता जनाः ॥३१॥
सर्वे जना मिलित्वो पा- श्रयं गत्वा गुरून् स्थितान् ।
ध्याने दृष्ट्वा मुदं प्रापु, र्व वंदिरे प्रशंसिरे ॥३२॥

श्री बापडाऊ नगरेथ वर्षा वासं समे बाण कराङ्ग चन्द्रे ।
पुन र्विकानेर पुरे रसाक्षि रसेन्दु वर्षे सुगुरुश्चकार ॥३३॥
ततो नगाक्ष्यङ्ग शशाङ्क वर्षे, वर्षा स्थितिं श्रीमहिमे विधाय ।
मेवात देशे विचरन् क्रमेणा-गरा पुरे श्रीसुगुरु र्जगाम ॥३४॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तत्रा भवन् श्रीसुगुरु प्रसादा, त्सद्धर्म कार्याणि च मासकल्पम्
विधाय सौरीपुर चन्द्रवाडि- श्रीहस्तिनापुःस्थ जिनेन्द्र यात्राम्
॥३५॥

समाययौ तत्र पुनः सगोप-पुरं प्रगच्छन्सुगुरु स्तथापि।
वर्षा स्थितिं श्राद्ध जनाग्रहेणा-गरे करोन्नाग कराङ्क चन्द्रे
॥३६॥ युग्मम् ॥

ततः खगाक्ष्यङ्क शशाङ्क वर्षे, वर्षा स्थितिं रुस्तपुरे सूरीन्द्रः।
ततो विकानेर पुरे चकार, संवन्नभो ग्न्यङ्क शशाङ्क वर्षे ॥३७॥

सूरिणा तत्र छाजेड़ा-मरसिंह विधापितम्।
दशम्यां माघ शुक्लस्या-जित बिम्बं प्रतिष्ठितम् ॥३८॥
पुनः फाल्गुन मासेत्र, नयणा श्राविका गृहीत्।
गुरोः पार्श्वात्सुसम्यक्त्व-मूलक द्वादश व्रतम् ॥३६॥

संवद्धरा वन्हि रसेन्दुवर्षे, संवत्कराग्न्यङ्ग शशाङ्क वर्षे।
गुरु र्विकानेर पुरे च वर्षा-वासद्वयं लाभ मवेत्य चक्रे ॥४०॥

ततो विहृत्य सूरीन्द्रः फलवर्द्धि पुरं ययौ।
श्रीपार्श्वनाथ चैत्यस्य, दर्शनार्थं यदागतः ॥४१॥
तदा सागरिक श्राद्धै स्तच्चैत्ये दायि तालकम्
हस्त स्पर्शात्तदुद्घाट्य, सोकरोज्जिनदर्शनम् ॥४२॥

ततो विहृत्यार्य गुरुश्चकार, वर्षा स्थितिं जेसलमेरु दुर्गे।
संवद्गुणाग्न्यङ्ग शशाङ्क वर्षे, श्राद्धाग्रहाल्लाभ मवेत्य सुष्ठु ॥४३॥

माघ शुक्लस्य पञ्चम्यां, वीजू श्राविकादरात्।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

फाल्गुन कृष्ण पंचम्यां, गेली श्राविकयापुनः ॥४४॥
गुरोः पार्श्वात्सुसम्यक्त्व, मूलक द्वादश व्रतम् ।
गृहीतमथ सूरीन्द्रो, देराउर पुरं ययौ ॥४५॥ युग्मम् ॥
विधाय दर्शनं तत्र, जिनकुशल सद्गुरोः ।
जेसलमेरु दुर्गं स, चन्द्रसूरिः समागतः ॥४६॥
संवच्चतु र्वन्हि रसेन्दु वर्षे, संवच्छराग्न्यङ्ग शशाङ्क वर्षे ।
श्राद्धाग्रहाल्लाभ मवेत्य वर्षा—स्थितिद्वयं श्री सुगुरुश्चकार ॥४७॥
ततो विकानेर पुरे मुमुक्षु, वर्षा स्थितिं देह गुणाङ्ग चन्द्रे ।
वर्षे ततः शैल गुणाङ्ग चन्द्रे, सूरिः सिरूणाख्य पुरे चकार ॥४८॥
ततो विकानेर पुरे गजाग्नि-रसेन्दु वर्षे सुगुरुश्चकार ।
वर्षा स्थितिं जेसलमेरु दुर्गे, संवत्खगाग्न्यङ्ग शशाङ्क वर्षे ॥४९॥
ततो नभो वेद रसेन्दु वर्षे,- श्री आसनीकोट पुरे विधाय ।
वर्षा स्थितिं श्री जिनचन्द्रसूरिः समागमज्जेसलमेरु दुर्गम् ॥५०॥
माघ शुक्लस्य पञ्चमम्यां, तत्र गुरु महोत्सवात् ।
मुनि महिमराजाय, वाचकाख्य पदं ददौ ॥५१॥
संवद्रसा वेद रसेन्दु वर्षे, चकार जालोरपुरे मुनीन्द्रः
वर्षा स्थितिं सागरिकाश्च तत्र, निर्लोठिताः श्रीगुरुणा विवादे॥५२॥
गुरोः कराब्ध्यङ्ग शशाङ्क वर्षे, वर्षा स्थिति गुर्जर पत्तनेऽभूत् ।
सूरीश्वरोत्रापि च सागरीयान्, जिगाय जैन प्रतिपन्थिन स्तान्
॥५३॥
श्राद्धाग्रहात्तत्र कृतार्य पूज्यै, वर्षा स्थिति र्वन्हि युगाङ्ग चन्द्रे ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

ततो युगाम्भोधि रसेन्दु वर्षे, श्रीस्तम्भने स्तम्भन पार्श्व रम्ये॥५४॥

ततो विहृत्य सूरीन्द्रो राजनगर माययौ ।
तीर्थयात्रोपदेशेन, तदा तत्रत्य वासिनौ ॥५५॥
श्राद्धौ संघपती योगी-नाथ सोमजि संज्ञकौ ।
शत्रुञ्जयादि यात्रार्थं, महा संघं चतुर्विधम् ॥५६॥
मेलयित्त्वा प्रकुर्वन्तौ, स्थाने स्थाने च दर्शनम् ।
जिनानां सूरिभिः सार्द्धं, सेरिसरं समागतौ ॥५७॥
माघ मासे महासंघो, बीकानेरा द्विनिर्गतः ।
सर्व देश जनाकीर्णो, ऽत्राप्य मिलच्चतुर्विधः ॥५८॥
चतुर्थ्यां चैत्र कृष्णस्य, यात्रा सिद्धगिरे मुंदा ।
महता तेन संघेन, समं कृता च सूरिभिः ॥५९॥

ततः शराम्भोधि रसेन्दु वर्षे, वर्षा स्थितिं सूर्यपुरे मुनीन्द्रः ।
ततो रसाम्भोधि रसेन्दु वर्षे, श्राद्धाग्रहा द्राजपुरे चकार ॥६०
ततो ऽक्षयतृतीयायां, कोडाख्य श्राविका गृहीत् ।
गुरोः पार्श्वात्सु सम्यक्त्व-मूलक द्वादश व्रत ॥६१॥
कृत्वा नगाम्भोधि रसेन्दु वर्षे, वर्षा स्थितिं गुर्जर पत्तने सः ।
पवित्रयन् राजपुरादि गत्वा, स्थात्स्तम्भने श्राद्ध जनाग्रहेण ॥६२॥
सर्वत्र नित्यं विचरन्मुमुक्षू, र्विबोधयन् भव्य जनान्मुनीन्द्रः ।
संघोपधान व्रत सत्प्रतिष्ठा,-दि धर्म कृत्यानि विधापयंश्च ॥६३॥
जिनेन्द्र धर्मे दृढयन् जनौघान्, जिनेन्द्र धर्म प्रतिपन्थि मुख्यान् ।
वाचंयमाभास कुसागरीयान्, निर्लोठयन् शास्त्र विधान पाठैः ॥६४॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

विद्वत्सभा प्राप्त जयः सदैव, स्याद्वाद शैल्यागम तत्ववेत्ता ।
आसीद् भृशं श्रीजिनचन्द्रसूरि, विद्वत्तया सर्व जने प्रसिद्धः
॥६५॥ त्रिभिर्विशेषकम् ॥

व्रतित्व विद्वत्त्व गुणित्व सौम्य- दमित्व सौरभ्य मलं गुरूणाम्,
स्वैरेण सर्वत्र विसर्पमाणं, साहेः सभायामगमत्क्रमेण ॥६६।

इतश्चाकबरः सम्राड्, धर्म जिज्ञासु सन्नयी ।
गुणज्ञः समदृष्ट्याऽभू त्सर्व धर्म प्रपश्यकः ॥६७॥
आकार्य स्वसभा मध्ये, सर्व धर्म विशारदान्
धर्मोपादेय तत्त्वस्य, संग्राहक सचा जनि ॥६८॥
यद्यप्यनार्य जातीय, कुलोद्भवस्तथाप्यभूत् ।
सोधिकाधिक कारुण्य, भाव वासित मानसः ॥६९॥
दीन दुस्थ जनोद्धार-करणं स निजात्मनः ।
परम कृत्य मज्ञासी, दार्यानार्य प्रजा समं ॥७०॥
सद्विद्वद्गोष्ठि शास्त्रार्थो-पदेश श्रवणे भवत् ।
अत्यन्त रसिक सम्रा, डकबर जलालदीः ॥७१॥
ततः सर्व मतालम्बि-विद्वांसस्तस्य संसदि ।
तन्मध्ये जैन विद्वांसो, प्यासन्सद्बुद्धिशालिनः ॥७२॥
हीरविजयसूर्यादि- जैन विद्वत्समागमात् ।
ववर्धे जैन धर्मानु-रागोस्य प्रति वासरम् ॥७३॥
लाभपुरे न्यदा सम्राट्, संस्थितोस्ति नरेश्वर ।
प्रगुणे कोविदव्यूहे, गुणा गुणविचारिणि ॥७४॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तदा तत्र श्रुता तेन, सम्राजा कोविदाननात्
श्रीजिनचन्द्र सूरीन्द्र-श्लाघा कोविदतोद्भवा ॥७५॥
ततः सम्राज उत्कृष्टे-हा जनि सूरि दर्शने ।
जैन धर्मविशेषाव-बोधाया पृच्छि साहिना ॥७६॥
अमुष्यको ऽत्रशिष्योस्ति, जगदुः पण्डितास्तदा ।
कर्मचन्द्राख्य मन्त्रीति, स आहूयाह तं प्रति । ७७ ।
मन्त्रीश्वराधुना युष्म, दूगुरुः कुत्र विराजते ।
स सूरिस्त्वरितं सोऽत्र, यथायाति तथा कुरु ॥७८॥
श्री जैन शासनोद्योत-करणैक परायणः
चतुर्बुद्धि निधि र्वाग्मी, सो वादी त्साहिनं प्रति ॥७९॥
राजेश्वरा धुना पूज्यः स स्तम्भने विराजते ।
ग्रीष्मर्तुः साम्प्रतं दीर्घ-पन्थो वृद्ध वयोस्ति च ॥८०॥
इत्यादि कारणै स्तस्या-गमनं प्रतिभासते ।
मेदुष्करं ततः सम्राट्, स्माह नायांति ते यदि ॥८१॥
तदातत्साधवोत्राश्वा-यांतु तत्राथ धी सखः ।
विज्ञप्तिपत्र मालेख्य-प्रैषी त्साहि नर द्वयम् ॥८२॥
ताभ्यां स्तम्भन मागत्य, सूरे पत्रं समर्पितम् ।
तद्गुरुणापि वाचित्वा, महालाभं विचार्य च ॥८३॥
षड्भिः सन्मुनिभिः सार्द्धं, महिमराज वाचकः
संप्रैषि लाभपुर्यां सो, प्यगमत्स्वल्पकालतः ॥८४॥युग्मम् ॥
सम्राडति प्रसन्नोभू, द्वाचक दर्शनेनहि ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

पृष्टो मन्त्रीश्वरस्तेनो–त्सुक तया भृशं पुनः ॥८५॥
कदायास्यति सूरीन्द्र-जिनचन्द्र जगद्गुरुः ।
यस्य दर्शन मात्रेण, मे भवेदानंदितं मनः ॥८६॥
अनेके जन्तवो भव्या, यस्य चरण सेवया ।
भवन्ति सुखिनो मंत्री, स्माहा थाकबरं प्रति ।८७॥
चतुर्मासी समायाता-त्यासन्ना तो भवेन्नहि ।
तद्विहार स्तदा साही, जगादधी सखं प्रति ॥८८॥
दर्शनं तस्य कृत्वाहं, कर्णाभ्यां देशना मृतम् ।
संपीय सफली कर्तुं, मिच्छामि निज जीवितम् ॥८९॥
गुरुं सन्तोषयिष्यामि, जीवाभय समर्पणात् ।
अतएव समायातु, सोऽत्रावश्यं जगद्गुरुः ॥९०॥
इत्युक्ताकबरः सोऽत्र, सूरीन्द्राह्वान हेतवे ।
विज्ञप्तिपत्र मालेख्य, प्रदत्तं तस्य मन्त्रिणः ॥९१॥
मन्त्रिणाप्यथ विज्ञप्ति-पत्र मायातु मत्र च ।
लिखित्वा स्तम्भने प्रैषि, साहि दूत चतुष्टयं ॥९२॥
शीघ्रं स्तम्भन मागत्य, सूरि दर्शन हर्षितैः ।
नत्वा भावेन तै दूतै, द्वे पत्रे गुरवेऽर्पिते ॥९३॥
पुनस्तत्र समागन्तुं, तै बह्वी प्रार्थना कृता ।
गुरुणा प्याग्रहं ज्ञात्वा, श्री पातिसाहि मन्त्रिणोः ॥९४॥
धर्म जिज्ञासु सम्राजि, जैन तत्त्व निवेशनात् ।
प्रभूत धर्म सत्कार्यं, श्री जैन शासनोन्नतिः ॥९५॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रभूत जीव सन्मार्ग, प्राप्त्याद्या यो भविष्यति ।
विचार्येति मनो कारि, तत्र गन्तुं सुनिश्चितम् ॥९६॥
त्रिभिर्विशेषकम् ॥

सूरि निषेधयन्तं त-द्विहारं तन्निवासिनम् ।
संघं सन्तोषयामास, बाढं संज्ञाप्य कारणम् ॥९७॥
सम्वद्गजाब्धि देहेला-षाढ शुक्लाष्टमी दिने ।
प्रस्थानं सुगुरुः कृत्वा, च चाल नवमी दिने ॥९८॥
मार्गे सुशकुना जाता, ततः संघः प्रहर्षितः ।
जातः क्रमा त्त्रयोदश्यां, सूरी राजपुरं ययौ ॥९९॥
सूरय स्तत्र संघेन, प्रवेशिता महोत्सवात् ।
वर्षाकाले कथं भावी, विहारो यमिना मिति ॥१००॥
श्री संघेन समं सूरिः प्रकरोति विचारणाम् ।
तत्रायासी त्पुनः साहि- फुरमान द्वयं गुरोः ॥१०१॥
तत्र लिखितमस्त्येवं, मन्त्रिणा ग्रह पूर्वकम् ।
लोकापवाद वर्षतूं, अलक्ष्या त्रेयतां गुरो ॥१०२॥
भवदागमने नात्र, बृहल्लाभो भविष्यति ।
तत्रत्य संघ सम्मत्या, विजहार ततो गुरुः ॥१०३॥
म्हेसाणा ग्रामतो भूत्वा, सूरिः सिद्धपुरं ययौ ।
तत्रत्य बब्बासाहेन, महोत्सवात्प्रवेशितः ॥१०४॥
तेन तस्मिन् क्षणे धर्मे, बहु द्रव्यं व्ययी कृतम् ।
तत्र पत्तन संघेन, समेत्य वन्दितो गुरुः ॥१०५॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

ततो विहृत्य सूरीन्द्रः प्रह्लाद पुरं गतः ।
गुरु स्तत्रत्य संघेन, महोत्सवात्प्रवेशितः ॥१०६॥
प्रह्लादपुरा यातं, सूरीश्वरं निशम्य च ।
हर्षा च्छिव पुरीशेन, सुलतानाख्य भूभुजा ॥१०७॥
जैनीय संघ मेकत्री–कृत्येयं शिष्टि रर्पिता ।
मत्प्रधान नरैः सार्द्धं, यूयं श्राद्धाश्च सत्वरम् ॥१०८॥
प्रह्लाद पुरं गत्वा, ऽत्रागन्तुं चन्द्रसूरये ।
आमन्त्रणं कुरुध्वं भोः, प्रभूतादर पूर्वकम् ॥१०९॥
त्रिभिर्विशेषकम् ॥

ते प्यथ तत्र विज्ञप्तिं, कृत्वा पश्चात्समाययु ।
ततो विहृत्य सूरीन्द्रः क्रमाच्छिवपुरीं ययौ ॥११०॥
स्वागतं सुगुरोः कर्त्तुं, मभिमुखं सहस्रशः ।
जना ययुश्च तूर्येषु, वाद्यमानेषु हारिसु ॥१११॥
स्थाने स्थाने लसन्मुक्ता-फल रौप्याक्षतादिभिः
गुरुं वर्द्धापयंतीषु, कुलवतीषु भक्तितः ॥११२॥
सद्गुणान्गीयमानासु, मधुर ध्वनिना गुरोः ।
गुरु पृष्टानु यातासु, नारीषु सधवासु च ॥११३॥
जय जयेति शब्देषु, जायमानेषु सर्वतः ।
सुश्रृंगारित हट्टादि-राजपथा प्रभूय च ॥११४॥
चैत्ये ऋषभदेवस्य, विधाय जिन दर्शनम् ।
श्री जिनचन्द्रसूरीन्द्रा, उपाश्रयं समागताः ॥११५॥
पञ्चभिः कुलकम् ॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

महुर शिवपुरी स्थायी, संघो भून्मुदितो भृशम् ।
तत्र स्वर्णगिरेः संघो, सूरिं नन्तुं समाययौ ॥११६॥
श्रीसुलतान रावोऽपि, विभूत्यागत्य सद्गुरून् ।
नत्वा स्तुत्वा यथा स्थानं, स्थित्वा श्रुत्वाप्त देशनाम् ॥११७॥
संघेन सम मत्रैव, पर्व पर्यूषणाभिधम् ।
पर्वोत्तमं विधातव्य, मिति गुरुं व्यजिज्ञपत् ॥११८॥
तद्वचः स्वीकृतं ज्ञात्वा–त्याग्रहं गुरुणा प्यभूत् ।
तत्रात्यन्तं तपस्यादि–धर्मकृत्यं मनोहरम् ॥११९॥
अमायुद्घोषणां श्रेष्ठे, तस्मिन्विधाप्य पर्वणि ।
राव पार्श्वात्प्रभूतांग्य-भय मदायि सूरिणा ॥१२०॥
राज्ये हिंसा निषेधार्थं, रावायादायि देशना ।
हित दा गुरुणा तेन, राकायां सा निषेधिता ॥१२१॥
ततो विहृत्य सूरीन्द्रो गाज्जावालीपुरं गुरोः ।
तत्रत्य बन्ना साहेन, पुः प्रवेशोत्सवः कृतः ॥१२२॥
तत्र लाभपुराच्छीघ्रं, पातिशाहि नर द्वयम् ।
आगत्य फुरमानैक-पत्रं श्री गुरवे ददौ ॥१२३॥
तत्र लिखित मत्रैव मतः परं भवादृशाम् ।
चतुर्मास्यां विहारेण, माभवतु परिश्रमम् ॥१२४॥
अतएव चतुर्मास्या, अनन्तरं द्रुतं पुरे ।
अस्मिन् भवद्भि रेतव्यं, न कर्त्तव्यं विलंबनम् ॥१२५॥
कार्त्तिक माश्चतुर्मासीं, यावत्तत्रैव संस्थिताः ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सूरयो जैन धर्मस्य, जाता महाप्रभावना ॥१२६॥
अनन्तरं चतुर्मास्या, मार्गशीर्षे शुभे दिने।
पुष्यार्के सुमुहुर्त्ते च, शकुने शुभ सूचके ॥१२७॥
प्रभूतैः साधुभिः श्राद्धै, र्गान्धर्वै र्याचकैः पुनः।
साहि नरैः समं सूरि, र्विजहार ततोदमी ॥१२८॥
श्री बीकानेर संघेन, वन्दिता गुरवो ध्वनि।
जेसलमेरु संघेन, द्रुणाडइ पुरे पुनः ॥१२९॥
ततो विहृत्य रोहिठ-पुरं गुरुः समागतः।
तन्निवासि थिरामेरा, कृत प्रवेशनोत्सवः ॥१३०॥
ताभ्यां सन्तोषिता दानं, वितीर्य याचकादयः।
चत्वारो मनुजा अत्र, तुर्यं व्रतं ललु र्गुरोः ॥१३१॥
योधपुरान्महान्संघो, ऽत्र गुरुन्नन्तु माययौ।
तेन लंभनिका पूजा-प्रभावनादिकं कृतम् ॥१३२॥
तदीश ठाकुरेणापि, स्वराज्ये द्वादशी दिने।
सूरि देशनया जीवा-भय मदायि शान्तिदम् ॥१३३॥
ततो विहृत्य सूरीन्द्र-पालीं जगाम तत्रहि।
नन्दी संस्थाप्य सुश्राद्ध-श्राद्धीभ्योर्पितवान्व्रतम् ॥१३४॥
दान शील तपो भाव-धर्मस्याराधना पुनः।
बही विशेष रूपेण, गुरु प्रसादतो जनि ॥१३५॥

. ...
....।१३६॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

लांबियां सोजतं बेना-तटं जेतारणादिकम् ।
पावयन्सुगुरुः प्राप, क्रमेण मेडता पुरम् ॥१३७॥
तस्मिन् क्षणे पुरे तस्मिन्, धन धान्य जनाकुले ।
समृद्धि शालिभिः श्राद्धै, जिनालयै विशोभिते ॥१३८॥
सुपराक्रमि बुद्धी द्धौ, कर्मचन्द्राख्य मन्त्रिणः ।
ऊषतु भाग्यचन्द्राख्य-लक्ष्मीचन्द्राभिधौ सुतौ ॥१३९॥
युग्मम् ॥

ताभ्यां महा जनै र्हस्ति-हय रथ पदातिभिः ।
वाजित्रै र्विविधैः सार्द्धं, तत्र पूज्याः प्रवेशिताः ॥१४०॥
पुरे लम्भनिका चैत्य, पूजा दान प्रभावनाः ।
ताभ्यां कृताः पुनः श्राद्ध-जना व्रतादिकं ललुः ॥१४१॥
अत्रायासी त्पुनः साहि-फुरमानं ततो गुरुः ।
सार्द्धं सकल संघेन, फलवर्द्धि पुरं ययौ ॥१४२॥
तत्र श्री पार्श्वनाथस्य, विधाय दर्शनं गुरुः ।
नागपुरं गतो मेहा-कृत प्रवेशनोत्सवः ॥१४३॥
त्रिशत शीविका यान-शत चतुष्टयैः समम् ।
वीकानेरस्थ संघोत्र, गुरुं वन्दितु मागतः ॥१४४॥
तत्र साधर्मिवात्सल्य-पूजा प्रभावनादिकम् ।
तेन कृतं ततो रीणी-ग्रामं गतः स सद्गुरुः ॥१४५॥
ठाकुरसिंह पुत्रेण, रायसिंहाख्य मंत्रिणा ।
तत्रत्येन पुरे सूरिः प्रवेशितो महोत्सवात् ॥१४६॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

महिमपुर संघोऽत्र, गुरून् वन्दितु माययौ।
सोपि कृत्वा जिनार्चादि-सत्कार्य मगमत्ततः ॥१४७॥
तत्रत्य वीरदासोपि. शंकर तनुजो गुरोः।
सार्थे लाभपुरं याव- द्भक्ति कर्तुं चचाल च ॥१४८॥
गुरवो पि ततो हापा-णइ पुरं गताः क्रमात्।
तत्रत्य श्रावकै स्तत्र, महोत्सवात्प्रवेशिता ॥१४९॥
गुर्वागमन सन्देशं, लात्वा लाभपुरं गतः।
यस्तस्मै प्रददौ मंत्री, स्वर्णादि पारितोषिकम् ॥१५०॥
गरो र्हापाणइ ग्रामा-गमन मवगम्य च।
लाभपुरस्थ जैनीया ऽखिल संघो मुदत्तराम् ॥१५१॥
स संघो मन्त्रिणा सार्द्धं, तत्र समेत्य दर्शनम्।
गुरोः कृत्वा पुनः सार्थे, भूत्वा लाभपुरं ययौ ॥१५२॥
पुरा सन्नागते सूरौ, मंत्री जगाद साहिनं।
भवन्निमन्त्रितः सूरि, रायातो स्त्यत्र साम्प्रतम् ॥१५३
तच्छ्रुत्वा कबरोतीव-प्रसन्नो भूज्जगादतम्।
अत्रानयत यूयं तान्, जगद्गुरू न्महोत्सवात् ॥१५४॥
तस्मिन्क्षणे गुरोः सार्थे, श्री जयसोम पाठकः।
विद्वान् कनकसोमाख्यो, महिमराज वाचकः ॥१५५॥
मुनी रत्ननिधानाख्य-गुणविनय पाठकौ।
समयसुन्दराद्याश्च, महान्तः सुयशस्विनः ॥१५६॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

आसन्प्रकाण्ड विद्वांसो, वर चारित्रपालकाः ।
द्रव्य क्षेत्र क्षणा दिज्ञा, एकत्रिंशत्सुसाधवः ॥१५७॥
त्रिभिर्विशेषकम् ॥

सबदि भाब्धि देहेन्दु-वत्सरे फाल्गुनार्जुने ।
द्वादश्यां नगरे पूज्यः विवेश साधुभिः समम् ॥१५८॥
आसीत्पुन र्दिने तस्मिन्, यवनेदाख्य पर्वकम् ।
तस्मिन्क्षणे बहुद्रव्य-व्ययं चकार धी सखः ॥१५९॥
सुगुरोः स्वागतं कर्त्तु, राज राजेश मल्लिकाः ।
खान शेख सुबेदारा-मीरोमरावकादयः ॥१६०॥
सर्वे प्रतिष्ठिताः साहि-नराश्च नागरी जनाः ।
साहि संप्रेषितं सैन्यं, शृङ्गारितं चतुर्विधम् ॥१६१॥
साहि प्रेषित तूर्याणि, गायन्तः सुगुरोर्गुणान् ।
याचका हर्षिताः श्राद्धा, भक्तिमन्तः समाययुः ॥१६२॥
त्रिभिर्विशेषकम् ॥

स्वप्रासाद गवाक्षस्थोअत्यंत प्रसन्नता युतः ।
साही गुरोः पथं पश्यन् दृष्ट्वा दूराज्जगद्गुरुम् ॥१६३॥
उत्तीर्य तत आगत्य, भक्ति विनय पूर्वकम् ।
वन्दित्वा सुखशातादि-पृच्छा पूर्वं गुरुं जगौ ॥१६४॥
युग्मम् ॥

भगवन् ! स्तम्भन द्रङ्गा-दत्रायातेन कष्टदम् ।
अभविष्यदवश्यं हि, भवन्मार्ग परिश्रमम् ॥१६५॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

किन्तु मया यतौ जीव-दया प्रचार हेतुना ।
यूय मत्र समाहूता, भवन्तोत्र समागताः ॥१६६॥
तता मयि कृपा सीमा, कृतास्ति भवतो ऽधुना ।
जैन धर्म विशेषाव-बोधं प्राप्य जगद्गुरो ॥१६७॥
जीवौघा भयदानादि-दत्वा वोध्व परिश्रमम् ।
अहमपाकरिष्येथ, गुरु र्जगाद साहिनम् ॥१६८॥ युग्मम् ॥
ध्येयोस्ति केवलं धर्म-प्रचार करणे हि नः ।
सदा विचरणाचारो, ऽस्माकं सर्वत्र वायुवत् ॥१६९॥
अतएवाध्वखेदोस्ति, नाऽस्माकं भो मनागपि ।
पालयितुं स्व कर्त्तव्यं, वयमाया महेत्रहि ॥१७०॥
धर्म जिज्ञासुतां दृष्ट्वा वोनश्च परमं मुदम् ।
भवत्येवं मिथो वार्त्ता-लापं प्रकुर्वतोस्तयोः॥१७१॥
अत्यन्तं हर्षितः साही, स्व हस्तेन गुरोः करम् ।
बाढं सम्मेलयामास, बृहत्सम्मान पूर्वकम् ॥१७२॥ युग्मम ॥
ततः साही गुरुं रम्यं, स्व प्रासादं निनायतौ ।
यथा स्थाने स्थितौ धर्म-गोष्टीं विते नतुर्मिथः ॥१७३॥
अकबर कृत प्रश्नो-त्तराणि प्रददन् गुरुः ।
ददौ सद्देशनां तस्मै, दृष्टान्त हेतु पूर्वकम् ॥१७४॥
गुरोः सुधामयीं पाप-ताप संहारिणीं वराम् ।
निशम्य देशनां साही, चित्तेत्यन्तं ररंजसः ॥१७५॥
तद्देशना प्रभावस्त-चित्ते पतत्कृपाङ्कुरः ।
प्रादुरासीत्पुनः पूज्य-भावं भक्ति गुरुं प्रति ॥१७६॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सुवर्ण रत्न मुद्रादि-सारवस्तूनि सद्गुरोः ।
सन्मुखं ढोकयित्वा चा-कबरो जगाद सद्गुरो ॥१७७॥
गृह्णीत यूय मेतेभ्यः किमपिमय्यनुग्रहम् ।
कृत्वाथसुगुरुः प्राह, न स्तह्यातुं न कल्पते ॥१७८॥
गुरोर्निर्लोभतां दृष्ट्वा, साही जहर्ष सद्गुरुं ।
तमाराध्य गुरुत्वेन, स्थापयामास मानसे ॥१७९॥
प्रासादाद्बहिरागत्या कबरो गुरुणा समं ।
प्राह प्रधान काज्यादि-सर्वसभाजनान्प्रति ॥१८०॥
इमे मुमुक्षवो जैना-चार्या धर्म धुरन्धराः ।
सन्ति गाम्भीर्य धैर्यादि-विशिष्ट गुणशालिनः ॥१८१॥
अद्यास्माक महोभाग्यं, धन धान्यादि वैभवम् ।
सफलं विद्यते मीषां, सुदर्शनं यतो जनि ॥१८२॥
गुरुमकबरो वादी, त्समेत्यात्र जगद्गुरो ।
अस्मदुपरि युष्माभि र्महती विहिता कृपा ॥१८३॥
अतः परंहि युष्माभि, रागत्यात्र निरन्तरम् ।
एकशो दर्शनं देय मस्माकं धर्म वृद्धये ॥१८४॥
यथास्थिरा मतिर्मेस्ति, दयाधर्मे तथास्तु मे ।
सन्तानान्तः पुरन्द्रीणा-मपि मतिर्दया वृषे ॥१८५॥
इदृशी मेऽभिलाषास्ति, भवद्भिर्गम्यतां मुदा ।
अधुनोपाश्रयं संघ-मनोरथः प्रपूर्यताम् ॥१८६॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

साहिना मन्त्रिणे दायि, शिष्टिर्लात्वा गजादिकान्
उत्सवेन समंपूज्याः संप्राप्यंता मुपाश्रयम् ॥१८७॥
गुरुर्जगौतदास्माकं, किमपि न प्रयोजनम् ।
आडम्बरेण किन्त्वस्ति, दयामय वृषेणहि ॥१८८॥
पुनः श्री साहिनादत्ता-ज्ञात्यंताग्रहपूर्वकम् ।
पूर्ववन्मन्त्रिणे सूरेः प्रापणार्थ मुपाश्रयम् ॥१८६॥
जह्वरी पर्वतेनाथ, धर्मनिष्ठेन धी सखः ।
अवादीमं करिष्येह, मितो यावदुपाश्रयम् ॥१६०॥
ततो मन्त्र्या ज्ञयातेन, प्रभूत युक्ति पूर्वकम् ।
महामहेन सूरीन्द्रा, स्ते प्रापिता उपाश्रयम् ॥१६१॥
तदा परैरपि श्राद्धै, धर्मश्रद्धालुभिर्वरैः ।
चित्त वित्तानुसारेणा-कारि धर्म प्रभावना ॥१६२॥
पुनर्गीतं प्रगायन्त्यः सुगुरु गुणगर्भितम् ।
गुरुं वर्द्धापयामासुः स्त्रियोमुक्ताफलादिभिः ॥१६३॥
पुनः सेवक गन्धर्वा, गुरु गुण प्रकीर्त्तकाः ।
सम्प्रापुः श्रावकादिभ्यो, द्रव्यादि मन इच्छितम् ॥१६४॥
श्राद्धेभ्यो गुरुणादायि, मङ्गलमय देशना ।
मधुर ध्वनिना संघ, स्तां श्रुत्वात्यन्त हर्षितः ॥१६५॥
सूरिं नत्वा जनाधन्य-धन्य जय जयारवम् ।
कुर्वन्तो मन्यमानाः स्व-कृतार्थं स्वगृहं ययुः ॥१६६॥
गुर्वायातेन तत्राभू, त्प्रत्यहमधिकाधिकम् ।
धर्मध्यान मिदं श्रेयो, ऽकबर कर्मचन्द्रयोः ॥१६७॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

याभ्या माह्वायितो दूर-देशादत्र गुरुर्वरः ।
ययौ साह्याग्रहाद्राज-प्रासादं प्रत्यहं गुरुः ॥१९८॥
धर्म देशनया तस्मै, समीचीन मदर्शयत् ।
स विशेष स्वरूपत्व, महिंसा जैन धर्मयोः ॥१९९॥
सतो त्यन्तमभूत्साही, दयालु धर्म तत्परः ।
प्रशंसति सदासोऽपि, स्वसभायां गुरोर्गुणान् ॥२००॥
श्वेताम्बरा मया दृष्टाः सन्ति वाचंयमा घनाः ।
अनेक धर्म नेतृणां, संसर्गो विहितो भृशम् ॥२०१॥
एतत्समो गुणी त्यागी, शान्तो वैराग्यवान्दमी ।
विद्वान्निरभिमानी न, कोऽपि दृष्टो मया जने ॥२०२॥
एतद्दर्शन संसर्गान्नोजन्म सफली भवत् ।
साही बृहद्गुरुत्वेन, सदाह्वयति सद्गुरुम् ॥२०३॥
तेथ बृहद्गुरुत्वेन, ख्यातिं गताः पुरेऽखिले ।
श्री साहि परिवारोऽपि, सर्वो भक्तो भवद्गुरोः ॥२०४॥
अन्यदा गुरुणा सार्द्धं, कुर्वन् चर्चां सुधार्मिकाम् ।
साही गुरोः पुरो भक्तया, मुंचच्छतैक मुद्रिकाः ॥२०५॥
साध्वाचार स्वरूपं स, प्रदर्शयन् गुरुर्जगौ ।
समग्रानर्थ दोषैक-स्थानं द्रव्यं प्रविद्यते ॥२०६॥
जीवहिंसा मृषावादा-दत्ताब्रह्म परिग्रहम् ।
प्रत्यक्तं सर्वथा याव जीवं यैर्नव कोटिभिः ॥२०७॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तेषां स्वव्रत भङ्क्त्वा-चार विरुद्ध भीतितः ।
तद्ग्रहणं तु दूरेस्तु-तत्स्पर्शोपि न कल्पते ॥२०८॥
एतत्पञ्च परित्यागा, न्निर्ग्रन्था जिनशासने ।
उच्यन्ते साधवस्तस्मा न्नेमागृह्णामहेवयम् ॥२०९॥
किंच धन कुटुम्बादि-त्यागाद्भवति दीक्षितः ।
पुनरनुचितं त्यक्त-ग्रहणं वमितान्नवत् ॥२१०॥
इमां निरीहितां वाणीं, सूरेः श्रुत्वा प्रहर्षितः ।
चकितोऽकबरोदात्ता, मुद्राधर्माय मन्त्रिणः ॥२११॥
तेन ता व्ययिता धर्मे, प्यैकदा मूल भेजनि ।
साहि पुत्र सलीमाख्य-सुरत्राण सुतावरा ॥२१२॥
गणका जगदुःसाहिन्, जनकानिष्ट कारिणी ।
त्याज्येयं कुत्रचित्स्थाने, मुखमपि न पश्यताम् ॥२१३॥
साह्याहूय तदा शेख-अबुलफजलादिनृन् ।
प्रपृच्छ मूल नक्षत्र-जन्मदोष प्रतिक्रियाम् ॥२१४॥
सतैः समं परामर्श्य, संपृष्ट्वा मन्त्रिणं जगौ ।
जैन मतानुसारेणा, स्योपशान्तिर्विधीयताम् ॥२१५॥
अथाकबर शिष्टयाष्टा-ह्नि महोत्सव पूर्वकम् ।
लक्ष रौप्य व्ययाच्चैत्र-शुक्लराका दिने शुभे ॥२१६॥
सुपार्श्वाष्टोत्तरी स्नात्रं विशेप विधिना पुनः ।
कारयामास मन्त्रीशो, महिमराज वाचकात् ॥२१७॥
श्री जिनचन्द्रसूरीणा, मादेशेन विधिश्चसा ।
लिखिता गद्यबद्धेन, श्री जयसोम पाठकैः ॥२१८॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

मङ्गल दीपकारात्रि-समयेऽकबरः समम् ।
स्व सुतेन सलीमेन, राजवर्गीय सन्नरैः ॥२१९॥
तत्रागत्य प्रभोरग्रे, रौप्य दश सहस्रकम् ।
विढोक्या दर्शयत्सार्व-भक्ति शासन गौरवम् ॥२२०॥

॥ युग्मम् ॥

तदा मन्त्र्यर्पितं शान्ति स्नात्र जलं स्वशान्तये ।
शाहि स्व चक्षुषोर्भक्त्या, लगयन्मन्त्रि जल्पनात् ॥२२१॥
पुनस्तस्य जलं प्रैषि. साहिनान्तः पुरे निजे ।
ताभिरन्तः पुरन्ध्रीभि, गृहीतं भाव पूर्वकम् ॥२२२॥
अस्मिन्नष्टोत्तरी स्नात्र-पवित्र दिवसेऽखिलैः ।
श्राद्ध श्राद्धी जनैः शान्त्यै, वराचाम्ल तपः कृतम् ॥२२३॥
ययु रेतदनुष्टाना, त्सर्वे दोषाः क्षयं ततः ।
जहर्षा कबरो त्यन्तं, पुरी जनोऽखिलः पुनः ॥२२४॥
संवत्खेटाब्धि देहेन्दु-वर्षे वर्षा स्थितिः कृता ।
तत्र साह्या ग्रहाल्लाभं, ज्ञात्वा यतौ च सूरिणा ॥२२५॥
अथार्य धर्म चैत्यादि-विध्वंस करणं महान् ।
म्लेच्छानां जन्मतो ह्यस्ति, स्वाभाविकश्च दुर्गुणः ॥२२६॥
यद्यपि साहि राज्येदृग्-पापकृत्य निषेधनम् ।
अभूत्तथापि तस्थुस्त त्कृत्यं कुर्वन्त एवते ॥२२७॥
यदा तत्र विराजन्ते, श्री जिनचन्द्रसूरयः ।
तदा दुःखद सन्देश, एकः श्रुतश्च मन्त्रिणा ॥२२८॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

नौरङ्गखान नामैक-म्लेच्छाधिकारिणाकृतः ।
द्वारिका जैन चैत्यानां, विनाशोऽकृत्यकारिणा ॥२२९॥
तेनापि गुरवे प्रोक्त, मुपदेशं वितीर्य च ।
साहिनस्तीर्थ रक्षायै, नोपायो क्रियते यदि ॥२३०॥
तदा म्लेच्छ जनास्तद्व, दन्य तीर्थ विनाशने ।
करिष्यन्ति विलम्बोना-त उपायो विधीयताम् ॥२३१॥
विज्ञाय गुरुणापीदं, सत्कार्य करणोचितम् ।
प्रदर्श्य जैन तीर्थानां, महात्म्यं साहिनं प्रति ॥२३२॥
तदुचितं प्रबंधंहि विधातुं सूचना कृता ।
साहिनापि गुरोराज्ञां स्व शिरस्यवधार्य च ॥२३३॥
श्री जैन तीर्थ रक्षायै, फुरमानं विलेखितम् ।
तन्निज मुद्रया कृत्वा मुद्रितं मन्त्रिणेर्पितम् ॥२३४॥
॥ त्रिभिर्विशेषकम् ॥

तत्र लिखित मस्तीद-मद्यप्रभृति संति हि ।
समस्त जैन तीर्थानि, मन्त्र्याधीन कृतानि च ॥२३५॥
रक्षितुं जैन तीर्थान्या-जमखान सुबोपरि ।
साही राजपुरं प्रैषी त्फुरमानं विलेखितम् ॥२३६॥
येन च फुरमानेन, यवनानामुपद्रवम् ।
शत्रुञ्जयोज्जयन्तादि- सत्तीर्थेषु निवर्तितम् ॥२३७॥
काश्मीरान्गन्तु कामेना, न्यदा नौ मध्यवर्त्तिना ।
साहिना मुदिते नैवं, कथितोमन्त्रिनायकः ॥२३८॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सुगुरवस्त्वयाशीघ्र माह्वाप्या वचसा मम ।
धर्मलाभो महांस्तेषां, मया देयोस्ति वांछितम् ॥२३९॥

सूरयोपि तदाहूता, ययुः श्री साहि सन्निधौ ।
श्री गुरोर्दर्शना देवा-नन्दितो भून्नराधिपः ॥२४०॥
शुचिमासे शुचौ पक्षे, प्रसन्नो दिन सप्तकम् ।
नवमीतो ददौसाहि, रमारि गुण पावनम् ॥२४१॥
द्वादशसुच सूबेषु, फुरमानानि साहिना ।
अमारिदानसत्कानि, प्रत्यब्दं प्रेषितानि च ॥२४२॥
साहिनोऽमारिदानस्य, फुरमान प्रकाशनात् ।
अन्येष सर्व भूपेषु, प्रभावः पतितो महान् ॥२४३॥
साह्यनुकरणं कृत्वा, स्व स्वदेशेषु भूमिपाः ।
दिनानामष्टकंकेचि, द्दशं पंचाधिकं दशं ॥२४४॥

केचित्तु विंशतिपंच-विंशति मपरे पुनः ।
मासंमासद्वयं याव, ज्जीवेभ्योह्य भयं ददुः ॥२४५॥

येना भूत्साहिनो त्यन्त-हर्षो धर्म प्रभावना ।
निरपराधि जीवानां, मिलिता सुखशांतिता ॥२४६॥

मे काश्मीर प्रवासेऽपि, श्री जैन मुनिभिः समम् ।
धमगोष्टी दयाधर्म-चर्चा भवतु सर्वदा ॥२४७॥

ततोऽमात्याय निर्दिष्टं, पूज्यालाभपुरे पुरे ।
तिष्ठन्तु मानसिंहास्त्वा, यान्तु साकं मयाधुना ॥२४८॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

धर्मगोष्टीं मिथः कर्त्तु, धर्तु जीवदया व्रजम् ।
अनार्यमार्यतां नेतुं, देशं तीर्थनिवेशनात् ॥२४६॥
मन्त्रिणापि तथेत्युक्ता, प्रोक्तं पूज्याय तद्वचः ।
गुरुणापि महालाभं, विज्ञाय मानितंतकम् ॥२५०॥
नभः शुक्ल त्रयोदश्यां, प्रयाणकं नरेश्वरः ।
श्रीराजा रामदासस्य, वाटिकाया मचीकरत् ॥२५१॥
तत्र तस्मिन्दिने सन्ध्या-क्षणे चैका सभाजनि ।
तस्यां साही सलीमश्च, सामन्त मण्डलेश्वराः ॥२५२॥

राजराजेश्वरानेक-वैयाकरण तार्किकाः ।
विद्वांसो मिलिता आसन्, सर्वविद्या बलोर्जिताः ॥२५३॥
युग्मम ॥

तस्यां सुगुरवोत्यन्त-मानसम्मानपूर्वकम् ।
आसन्निमन्त्रिताःस्वीय-शिष्य मण्डलिभिः समम् ॥२५४॥
किंचपुरा किलैकस्मिन्, समये साहि पर्षदि ।
विद्वगोष्ठीं वि तन्वत्सु विद्वत्सु, सर्वधार्मिकाम् ॥२५५॥
"एगस्स सुत्तस्स अणंतो अत्थोत्ति"
एतस्मिन् जैन धर्मीय-वाक्ये प्राज्ञेन केनचित् ।
कृतोभूदुपहासस्त, द्वाक्यं श्रीगुरुणाश्रुतम् ॥२५६॥
श्रीमहामहोपाध्याय-गणि समयसुन्दरः ।
तत्सूत्र वचनं सत्यी-चकार वर पण्डितः ॥२५७॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

राजानो ददते सौख्य. मस्य वाक्यस्य बुद्धिना।
अश्वखाब्धि कराक्ष्यभ्रे-न्दु संख्यार्थ विधानतः ॥२५८॥
युग्मम् ॥

कदाचित्पुनरुक्त्यादि-दोषोद्भवो भवेत्ततः।
तन्मध्यादष्ट लक्ष्यार्थाः प्रकटास्तेन रक्षिताः ॥२५६॥
अर्थरत्नावली रत्न-मञ्जूषा चाष्टलक्षिका।
इति नाम त्रयेणासौ, ग्रन्थःख्यातिं गतो जने ॥२६०॥
तस्यां संसदि माहीतं, ग्रंथं समयसुन्दरात्।
अवाचयन्निशम्यैनं, संजहर्षु सभाजनाः ॥२६१॥
समयसुन्दरस्यास्य, ग्रन्थस्य साहिना कृता।
बह्वी श्लाघा च विद्वद्भि राश्चर्यकौतुकांचितैः ॥२६२॥
सौभाग्य शालि निर्मातृ-समयसुन्दरस्यसः।
हस्तेर्पितः स्वहस्तेन, साहिना जगदेपुनः ॥२६३॥
संश्लाघ्यो जैन साहित्य ग्रन्थोऽपूर्वोयमस्ति हि।
कर्त्तव्योतः प्रचारोस्य, विलेख्यानेकशः प्रतीः ॥२६४॥
ततो मंत्री निराबाधं, महिमराज वाचकम्।
हर्षविशाल युक्तं चा, चालय त्साहिना समम् ॥२६५॥
साहि निर्दिष्ट सावद्य-व्यापार परिशीलनात्।
मुनीनां मा व्रताचार-विलोपो भवतादिति ॥२६६॥
विभाव्यमंत्र तन्त्रादि-निपुणं दत्तवान्समम्।
पञ्चाननं महात्मानं, विनेयं मेघमालिनम् ॥२६७॥
वासो गृहं तथात्मीयान्, भटान्साधूनुपासकान्।
गुरु भक्तिचिकीः सार्थे, सद्युक्त्या योजयत्तराम् ॥२६८॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्वद्यान्न पानादि, व्यवस्थाया विधानतः ।
तथा कार्षीन्महामात्यो, यथाधर्मः समेधतः ॥२६९॥
स्वयं तु साहि वाक्येन, रोहितासपुरे स्थितः ।
अवरोधस्य रक्षार्यै, विश्वास्यास्पद मीशितुः । २७०॥
मार्गेथ साहिना नित्यं, वाचकैः सह कुर्वता ।
धर्मवार्त्तां तडागादौ, जीवहिंसा निषेधिता ॥२७१॥
क्रियाकाठिन्य मालोक्य, गृहीत व्रत निश्चयम् ।
तस्य प्रहर्षितः साही, स श्लाघे वाचकंचतं ॥२७१॥
साही विजित्य काश्मीरान्, श्रीनगरं समाययौ ।
वाचकोक्तः स तत्राष्टा-न्हममारि मपालयत् ॥२७३॥
कुर्वन्दिग्विजयं शत्रू, न्नामयन्माघ मासि च ।
क्रमाल्लाभपुरे पौर-कृत शोभे विशत्प्रभुः । २७४॥
विद्वद्भिर्जयसोमाख्य समयसुन्दरादिभिः ।
स्व शिष्यैः सह सूरीन्द्रा, द्रव्यक्षेत्रादिवेदिनः ॥२७५॥
साहिनो मिलिता दत्त-धर्मलाभाशिषा वराः ।
साह्यपि सुगुरोः कृत्वा, दर्शनं मुदितो भवत् ॥२७६॥

राजेश साह्यकबर प्रतिबोधकस्य
श्री जैन शासन समुन्नति कारकस्य ।
श्रीमज्जगद्गुरु सवाइ युगप्रधान-
भट्टारकस्य चरिते जिनचन्द्रसूरेः ॥१॥

इति श्री जिनचन्द्रसूरि युगप्रधान सद्गुरुचरिते ।
अकबर प्रतिबोधकरण वर्णनात्मक स्तृतीय सर्ग समाप्तः ॥

—o—

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ चतुर्थः सर्गः

अन्यदा साहिना धर्मा-धर्मगोष्टी व्यतीकरे ।
वादिता गुरवोनूनं, श्री जिनचन्द्रसूरयः ॥१॥
तेनोक्तं दर्शनं क्वापि, युष्मद्दर्शन सन्निभम् ।
दम्भ निर्मुक्तमायुक्तं, नैवास्माभिर्निरीक्षितम् ॥२॥
मानसिंहः सहस्माभि, र्निरुपानत्व पादगः ।
यां व्यथा सुमनासेहे, तां वक्तु कोऽपिनक्षमः ॥३॥
अस्माभिर्बहुधोक्तोऽपि, निजाचार चिकीर्षया ।
योंगी कृत निजाचार-प्रतिज्ञामत्य वाहयत् ॥४।
काश्मीर वर्मयःशैल-शिला शकल संकुलम् ।
पद्भ्या मेवातिचक्राम, गम्यं यन्न मनोरथैः ॥५॥
क्रियातुष्टै रतोऽस्माभि, र्निरीहस्यान्य वस्तुनि ।
काश्मीरेषु ददे मीना-भयदानं समीहितम् ॥६॥
अतोऽस्मदाश्याह्लाद-हेतवेति विशारदः ।
स्वपदे मानसिंहाह्वः, स्थाप्यो युष्माभिरादृतैः ।।७ ।
पूज्यैरुक्त मिदं युक्तं,-मुक्तं श्रीपतिसाहिना ।
पुनः श्री साहिना प्रोक्तं, कर्मचन्द्राख्यमन्त्रिणे ।।८॥
भो मन्त्रिन्कथयत्वं श्री-मज्जिनचन्द्रसद्गुरोः ।
उत्कृष्ट मभिधानं किं, विधेयं जिनदर्शने ॥६॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अथाख्यद्धी सखः स्वामिन्, प्रसिद्धं जिनशासने।
अस्मद्गच्छेऽभिधानंत, त्पुराहि विबुधार्पितम् ॥१०॥
किं नाम कथमाख्यातं, केन कस्य गुरोरिति।
साहिनोक्ते सवृत्तान्तो, मन्त्रिणा वाचि मूलतः ॥११॥
श्रावको देव नागाख्यः, श्री गिरनार पर्वते।
उपवासत्रयं कृत्वा-म्बिकामाराध्य चावदत् ॥१२॥
हेऽम्बेऽस्मिन् भरतक्षेत्र, आचार्यः कोऽस्ति साम्प्रतम्।
विबुधैः संस्तुतो युग-प्रधान पदधारकः ॥१३॥
तमात्मनो गुरुत्वेना, ऽहं स्थापयामि सांबिका।
लिलेखैकं तदाश्लोकं, तत्करे काञ्चनाक्षरैः ॥१४॥
यः कश्चित्तव हस्तस्था-क्षराणि वाचयिष्यति।
ज्ञेयो युगप्रधानः स, इत्युक्ता सा तिरोदधे ॥१५॥
तः सश्रावकः स्थाने, स्थाने हस्तमदर्शयत्।
आचार्येभ्यः परंकोप्य, भून्नवाचयितुं क्षमः ॥१६॥
अथ स पत्तन द्रङ्गं, गत्वा बावड़पाटके।
श्री जिनदत्तसूरीणां, पार्श्वे हस्तमदर्शयत् ॥१७॥
प्रक्षिप्य तत्करे वास-चूर्णं श्री दत्तसूरिणा।
आज्ञा दत्ता स्वशिष्याय, तेनाऽपि वाचितं तदा॥१८॥

यथा :—"दासानुदासा इव सर्व देवा,
यदीय पादाब्ज तले लुठन्ति।
मरुस्थली कल्पतरुः सजीया,-
द्य गप्रधानो जिनदत्तसूरिः ॥१॥"

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

परम भक्तिमान् श्राद्धो, नागदेवो भवत्ततः।
जनमान्यः ससम्यक्त्व-द्वादश व्रत धारकः ॥१९॥
श्रुत्वेति विस्मितश्चित्ते, साही स्माह मयार्पितम्।
तन्नामैषां तदाम्नाय-भुवां विलोक्ययोग्यताम् ॥२०॥
श्रीमन्महिमराजस्य, सिंहतुल्यस्य शक्तितः।
श्रीजिनसिंहसूर्याख्या, देया सद्गुण शालिनः ॥२१॥
सुमुहूर्त्ते महामात्य, स्वशास्त्र विधिना त्वया।
महोत्सवेन कार्येयं, प्रवृत्तिर्जन साक्षिकम् ॥२२॥
इत्युक्ते साहिना राय-सिंह भूपायमन्त्रिणा।
वीकानेरपुरेशाय, सवृतान्तो निवेदितः ॥२३॥
तेनाऽपि सम्मतिश्चाज्ञा, दत्ताऽस्मिन् शुभकर्मणि।
तेन पौषधशालायां, संघोप्य मिलितोऽखिलः ॥२४॥
मंत्री तं प्राह संघोऽस्ति, यद्यपि सर्वकर्मणि।
क्षमस्तथापि मे शिष्टि, रेतत्कर्त्तुं प्रदीयताम् ॥२५॥
मन्त्रीशोवाप्य संघाज्ञां, श्रीशंखवाल गोत्रिणा।
श्रावक साधुदेवेन, कारिते सुमनोहरे ॥२६॥
अहूताऽनेक गच्छीयो·पासक व्रात सुन्दरे।
वस्त्राभरण मुक्ताभिः, मण्डिते सदुपाश्रये ॥२७॥
कुम्भस्थापन दिग्पाल-ग्रहाद्याह्वान पूर्वकम्।
चतुर्मुखाब्ज संस्थानां, विज्ञानि जन निर्मिताम् ॥२८॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

दुकूलादर्श सौवर्णा भरणावलिभूषिताम् ।
नन्दिसंस्थाप्य सच्चैत्य-चतुष्टय विराजिताम् ॥२९॥
फाल्गुनमासकृष्णस्य दशम्यां च शुभेक्षणे ।
प्रारभत महायुक्त्याष्टाह्निका सुमहोत्सवम् ॥३०॥
पञ्चभिःकुलकम् ॥

तत्र भक्त्यास्वकीयानि दत्तानि पतिसाहिना ।
वाजित्राणि सुहृद्यानि वाद्यन्तेस्म मुहुर्मुहुः ॥३१॥
सर्वाः संघ्या प्रभातादौ श्राविका हर्षितावराः ।
देवगुर्वादिगीतानि जगुर्मनोहराणि च ॥३२॥
तदा स्वधर्मिबन्धूनां सर्वेषां प्रतिमन्दिरम् ।
सरंगमेकनीरङ्गीवासःपुङ्गीफलानि च ॥३३॥
सेर प्रमाण मत्स्यन्दीं सरसं पत्रबीटकम् ।
श्रीफलमिति मंत्रीशो भद्राय प्रैषयद्गृहान् ॥३४॥ युग्मम् ॥
कुंकुमपत्रिकादानात्सर्वत्र दूरदूरतः ।
आयाताः सन्तिभावेन, तत्र श्राद्धादयोजनाः ॥३५॥
तत्र पुनर्महाभूत्या भण्यन्तेस्म जिनेशितुः ।
सप्तदशप्रकारादि वृहत्पूजामनोहराः ॥३६॥
पुनर्व्याख्यान पूजादौ श्राद्धैःस्मक्रियतेभृशम् ।
सुपुङ्गीफलं दीनार-श्रीफलादि प्रभावना ॥३७॥
निष्कासिता पुनस्तत्र श्राद्धैराश्चर्यकारिणी ।
महाभूत्या महायुक्त्या रथयात्रा जिनेशितुः ॥३८॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

पुनस्तत्र यथाशक्त्या विधीयतेस्म हर्षितैः ।
श्राद्धैः स्वधर्मिवात्सल्यं शिवसुखफलप्रदम् ॥३९॥
फाल्गुनमासशुक्लस्य तृतीयायां जयातिथौ ।
मध्याह्ने योगनक्षत्रलग्नशुद्धि समन्विते ॥४०॥
श्री जिनचन्द्रसूरीन्द्रै र्महिमराजवाचकः ।
सूत्रोक्तविधिनाकारि-सूरिपद विभूषितः ॥४१॥ युग्मम् ।
श्री साहि कथनात्सूरि-मन्त्रप्रदान्पूर्वकम् ।
श्रीजिनसिंहसूर्याख्या तस्य सुगुरुणार्पिता ॥४२॥
तदैव जयसोमाय रत्ननिधान साधवे ।
उपाध्यायपदं दत्तं सूरिणा बुद्धिशालिने ॥४३॥
गुरुणा वाचनाचार्य पदविभूषितौ कृतौ ।
श्रीगुणविनयाख्य श्री समयसुन्दरौ मुनी ॥४४॥
तदास्तम्भन तीर्थाब्धि-यादो हिंसा च साहिना ।
आवर्षन्त्याजितात्रैकंदिनमन्त्यं पुरेपुनः ॥४५॥
समयेऽस्मिन् समायातान् द्रष्टुं नन्दि महोत्सवम् ।
आबालवृद्धलोकांश्च श्रावकान् याचकानपि ॥४६॥
सर्वेभ्यो हेममुद्राप्रदातु कामोपि धीसखः ।
रूप्यमुद्रैव मांगल्यहेतुरित्युदितो जनैः ॥४७॥
ततः केशरकस्तूरी चन्दनाम्बु छटाद्रुताम् ।
रौप्यमुद्रां ददौ मन्त्री सर्वेभ्यो मानपूर्वकम् ॥४८॥
याचकेभ्यः पुनर्मन्त्री नवग्रामान् गजान्नव ।
पञ्चशतहयान्कोटि-द्रव्यं दानाग्रणीर्ददौ ॥४९॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

इदृग्दानं न केनापि प्रदत्तं प्राग् पदोत्सवे ।
ख्यातिकरं ततः सर्वः संघो मन्त्रिगृहं ययौ । ५०॥
सचिवोऽपि तदा साहि-वाद्यवादनपूर्वकम् ।
स्वगृहागतसंघाय सन्मानमधिकं ददौ ॥५१॥
विशिष्टैः पुरुषैः शेखाद्यबुलफजलादिभिः ।
वेष्टितः कर्मचन्द्राख्यमन्त्रीलात्वो पदांवराम् ॥५२॥
साहिनो मन्दिरं गत्वा सर्वाध्यक्षं पुरोदश ।
गजान्द्वादशवाजीन्द्रान् वासांसि विविधानि च ॥५३॥
दश सहस्र रौप्यांश्च प्राभृती कृतवानिति ।
साह्यपिमङ्गलायैकं रौप्यं तन्मध्यतो ललौ ॥५४॥
एवं शेखू सुरत्राण-पुरोऽपि विधृतोपदा ।
मंत्रीश्वरेण शेखाणामपिपुरः पुनः क्रमात् ॥५५॥
श्राद्धादीनामवर्णीया-नन्दोत्साह सुभक्तितः ।
अस्योत्सवस्यहृन्नेत्रनिवृत्तिकारिणी वरा ॥५६॥
अत्यन्त दर्शनीया भूयाशोभाश्चर्यकारिणी ।
तां न वर्णयितुं शक्तस्तत्पश्यकोपि पार्यते ॥५७॥ युग्मम् ॥
निर्विघ्नेन समाप्तं तत्सूरिपदमहोत्सवम् ।
श्रीशान्ति-स्नात्र दिग्पालादि विसर्जन पूर्वकम् ॥५८॥
सांवत्सरिचतुर्मासी-पाक्षिकानां प्रतिक्रमे ।
जयतिहुयण स्तोत्रं स्तुतिं च पठितुं सदा ॥५९॥
गुरुणार्पितआदेशो बोहित्थ वंश सन्ततेः ।
एतैरपि स आदेशो दत्तः श्रीमाल सन्ततेः ॥६०॥ युग्मम् ॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री वीकानेर भूपाल-रायसिंहेन भक्तितः ।
तत्र फाल्गुन शुक्लस्य द्वादश्यां चन्द्रसूरये ॥६१॥
प्रलाभितानि जैनानि द्वादश पुस्तकानि च ।
श्री वीकानेर चित्कोषे तानिस्थापितवान्गुरु ॥६२॥ युग्मम्॥
युगप्रधानपदात्प्राग् केनापि साहिनं प्रति ।
जगदे ज्ञानिनः सन्ति श्रीजिनचन्द्रसूरयः ॥६३॥
गुरुज्ञान परीक्षार्थमन्यदाकबरो गुरोः ।
सभागमनवेलायामेकांगर्भवतीमजाम् ॥६४॥
संस्थाप्याध्वस्थगर्त्तायां तद्द्वारं प्रपिधायच ।
स्वयं तु स्वागतार्थं श्री-गुरोः सन्मुखमागतः । ॥६५॥ युग्मम्॥
नरनारीद्वयापत्यं भूसंसर्गादजीजनत् ।
साजाथसाहिनासार्द्धं मग्रे गच्छन् जगद्गुरुः ॥६६॥
योगबलेनगर्त्तास्थान् तान्ज्ञात्वावग् नृपेश्वरः ।
अत्र भूस्थास्त्रयोजीवाः सन्त्यैको नाबलाद्वयम् ॥६७॥
गन्तुं तदुपरिस्तान्नो न कल्पतेथ साहिना ।
अत्रैका स्थापिताजापि जाता जीवा स्त्रयः कथम् ॥६८॥
विचार्येति समुद्घाट्य तस्यां दृष्टास्तथैव ते ।
ततः श्री गुरवे युग-प्रधान पदमर्पितम् ॥६९॥
चतुर्भिः कलापकम्॥

सूरि प्रभूत सत्कारं, क्रियमाणं च साहिनम्
दृष्ट्वेर्षयाभिमानेन ज्वलन्काजी गुरूपरि ॥७०॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सूरीन्द्रमानहान्यर्थमन्यदा साहि संसदि ।
वियत्युड्डापयामास स्वटोपीं मन्त्रशक्तितः ॥७१॥ युग्मम्॥
गुरुणापि ततो मुक्तस्तत्पृष्टतो वृषध्वजः ।
नीचैरानीय तां तस्य स्थापयामास मस्तके ॥७२॥
स निष्फलोद्यमः काजीममुचेर्षाभिमानकौ ।
अन्यदप्येकमाश्चर्यं तत्रैवाजनि तद्यथा ॥७३॥
तिथिरद्य किमस्तीति पृष्टो मौलविनैकदा ।
गौचर्यार्थं भ्रमन्नेको गुरु शिष्यो विचक्षणः ॥७४॥
तेनाऽपि सहसा राकोक्तामावस्यादिने सति ।
ततो मौलविना सा च वार्त्ता छिद्रगवेषिणा ॥७५॥
जैना मृषा प्रजल्पन्तीत्याद्य् पहास पूर्वकम् ।
विस्तारिताऽखिलेद्रङ्के यावच्च साहि-संसदि ॥७६॥ युग्मम्॥
ततो विज्ञातवृत्तान्तः श्राद्धादानाय्यसद्गुरुः ।
सौवर्णस्थालमाकाशे मंत्र शक्त्या मुमोचहि ॥७७॥
सस्थालः पूर्णिमा ग्लौवन्निश्युदयादि दर्शयन् ।
सर्वतो द्वादश क्रोशं यावत्प्राकाशयत्तराम् ॥७८॥
साह्यपि सर्वतः प्रेषिताश्ववारमुखाद्विधोः ।
प्रकाशोऽस्तीति संश्रुत्वा हर्षितो विस्मितो जनि ॥७९॥
एवं लाभपुरे सूरेर्विराजनादनेकशः ।
अभवन् धर्म कृत्यानि जैन धर्म प्रभावना ॥८०॥
ततो विहृत्य सूरीन्द्रैर्हापाणइ पुरे कृता ।
चतुर्मासी च संवत्ख-बाणांग विधु वत्सरे ॥८१॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

निशायामेकदायाताश्चौरा गुरोरुपाश्रयम् ।
पुस्तकानि समग्राणि लात्वा यावत्प्रयान्ति ते ॥८२॥
सूरियोगबलेनान्धा दिग्मूढास्तावदाभवन् ।
पश्चात्सर्वाणि गुर्वन्ते पुस्तकानि समाययुः ॥८३॥
ततो गुरु प्रशंसाभू-द्बह्वी सुगुरु योगतः ।
तत्र दानादि सद्धर्म-करणीचाधिकाधिकी ॥८४॥
तदा लाभपुरे सूर्याज्ञया वर्षास्थितिः कृता ।
गीतार्थ जयसोमोपाध्यायेन मुनिभिः समम् ॥८५॥
सूरिपरमसद्भक्तः सम्राडकबरोर्निशम् ।
क्षेमकुशलसन्देशं पृच्छन्नामस्मरन् गुरोः ॥८६॥
पर्षदायात गीतार्थ श्री जयसोम पाठकात् ।
धर्मश्रवण चर्चादिकुर्वन्नानन्दितो भवत् ॥८७॥ युग्मम्॥
साहि नाथ चतुर्मास्यानन्तरं गुरवोवराः ।
आमन्त्रिताः समायातुमत्रात्याग्रह पूर्वकम् ॥८८॥
लाभं ज्ञात्वा समायाताः पूज्या लाभपुरं वराः ।
तत्र वर्षास्थितिंचक्रुश्चन्द्रेष्वङ्गेन्दुवत्सरे ॥८९॥
अस्यामपि चतुर्मास्यां सूरीश्वर समागमात् ।
अनुत्तर प्रभावो हि पतितोऽकबरो परि ॥९०॥
साहिना येन राज्येस्वे सर्व दिवसमेलनात् ।
प्रतिवर्षं च षण्मासं यावद्धिंसा निषेधिता ॥९१॥
श्री शत्रुञ्जय तीर्थस्य करो दूरीकृतः पुनः ।
कृतः सर्वत्र गोरक्षा-प्रचारो जैन भूपवत् ॥९२॥ युग्मम्॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री जैनदर्शनाहिंसा-तत्वज्ञानेन साहिनः ।
हृदयं कोमलं जातं दयार्द्रं च विशेषतः ॥९३॥
कम्पते हृदयं जीव-हिंसा श्रवण मात्रतः ।
यस्य यस्त्यक्तवान् यावज्जीवं च मांसभक्षणम् ॥९४॥
साहिनो जीवहिंसादि निषेध करणेऽखिलम् ।
श्रेयोस्ति जैन साधूनां सदा समागमस्य हि ॥९५॥
जैन धर्मानुयायीति संकथनेऽपि साहिनः ।
प्रभावोऽस्ति गुरोर्नित्यं धर्मोपदेशदायिनः ॥९६॥
साही न केवलं भक्तोऽभूद्गुरोः किन्तु भक्तिमान् ।
तत्सर्वपरिवारोऽपि तन्नियोगि गणोऽग्रगः ॥९७॥
अभूत् साही स्वजातीय-जनोपद्रवतः सदा ।
शत्रुञ्जयादि जैनीय-तीर्थं रक्षाकरो भृशम् ॥९८॥
कियतां जैन शास्त्राणां विज्ञाताऽकबरो भवत् ।
जैनीय साधु संसर्गा ज्जैनतत्वरहस्यवित् ॥९९॥
प्रवचनपरीक्षादीन्मिथो विरोधवर्द्धकान् ।
धर्मसागरिक ग्रन्थान् सन्मार्ग नाशकान् पुनः ॥१००॥
दृष्ट्वाविद्वत्सभाध्यक्षं विद्वद्भिः सह साहिना ।
तेषां प्रकटितात्यन्तममान्यत्वा प्रमाणता ॥१०१॥ युग्मम्॥
तेषां जैन पथोत्तीर्णत्वामान्यत्वा प्रमाणता ।
सर्वत्र फुरमानेन प्रकाशिता च साहिना ॥१०२॥
अनन्तरं चतुर्मास्याः संघेन सह सद्गुरुः ।
श्री गुरुमुकुट स्थाने कुशलसूरि पादुकाम् ॥१०३॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

स्थापितां कर्मचन्द्रेण ववंदे च ततो ययौ।
हापाणइ पुरं ग्रामानुग्रामं पवित्रयन् ॥१०४॥ युग्मम्॥
श्राद्धाग्रहेण तत्रैवाकरोद्वर्षास्थितिं गुरुः।
संवत्करशराङ्केन्दुवर्षे लाभमवेत्यसः ॥१०५॥
साही लाभपुरे श्रौषी चरितंदत्तसद्गुरोः।
श्रीपञ्चनद्यधिष्ठातृपीरादि साधनं यदा ॥१०६॥
साहिना पञ्चपीरादि-साधनाय तदा कथि।
गुरवे गुरुणाप्येतत्साधनाय विचारितम् ॥१०७॥
तत्साधन विशेषानुकूलतां प्राप्य सद्गुरुः।
ततो विहृत्य कुर्वाणः स्थाने स्थाने वृषोन्नतिम् ॥१०८॥
ससंघो मुलतानाख्यपुरंगतस्ततोऽखिलाः।
खान मल्लिक शेखादिपुर्लोकाः श्रावकाः पुनः ॥१०९॥
गुरोः सन्मुखमागत्य भावेन तं ववंदिरे।
तैर्महाडम्बरात्तद्रङ्गे सुगुरवः प्रवेशिताः ॥११०॥
ततो विहृत्य सूरीन्द्र ससंघ प्राप पुन्यवान्।
पञ्चनदीतटस्थायि तंदुवेलाख्यपत्तनम् ॥१११॥

त्रिभिर्विशेषकम् ॥

साह्याज्ञया विहारेऽस्मिन्, स्थाने स्थानेऽनुकूलता।
गुरोरादरसत्कारो जीवदया विसर्पणम् ॥११२॥
एवं धर्मोन्नति र्बह्वी धर्मवृद्धिरभूत्पुनः।
तत्प्रशस्तयशः कीर्त्तिः पाञ्चालसिन्धुदेशयोः ॥११३॥

युग्मम् ॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

द्वादश्यां माघशुक्लस्य पुष्पार्के च शुभे क्षणे ।
स्थिर-ध्यानस्थ आचाम्लाष्टम तपोन्वितः पुनः ॥११४॥

नौका स्थितो गुरुः पञ्च-सरितां सङ्गमं ययौ ।
अतिवेगप्रवाहाढ्यं गम्भीरागाढजीवनम् ॥११५॥ युग्मम॥

तत्र गुरोः स्थिरध्यानान्नौका स्थिराऽभवत्ततः ।
श्री सूरिमन्त्रजापेन तपशूशीलप्रभावतः ॥११६॥

आकृष्टाः पञ्चपीराश्च खोडियो क्षेत्रपालकः ।
माणिभद्रादयो यक्षाः प्रत्यक्षीभूय सूरये ॥११७॥

धर्मोन्नति सहाय्यार्थं वरं दत्त्वा तिरोदधुः ।
प्रभाते थ समायातः पूज्याः पुरं महोत्सवात् ॥११८॥
त्रिभिर्विशेषकम्॥

घोरवालकुलोत्पन्न नानिगसूनुना तदा ।
राजपालेन सत्कीर्त्तिरुपार्जिता धनव्ययात् ॥११९॥

ततो विहृत्यसूरीन्द्रो ऊच्चनगरमागताः ।
तत्र श्रीशान्तिनाथस्य चक्रुः पवित्रदर्शनम् ॥१२०॥

तेथ देराउरं गत्वा गुरुचरणपादुकाम् ।
जिनकुशलसूरीन्द्रस्वर्गस्थाने ववंदिरे ॥१२१॥

जिनमाणिक्यसूरीन्द्र-स्वर्गभूमिस्थितस्य तैः ।
जैसलमेरु मार्गस्थ स्तूपस्य दर्शनं कृतम् ॥१२२॥

नवहरपुरे पार्श्वनाथ यात्रां विधायते ।
जेसलमेरु दुर्गं श्रीसद्गुरवः समाययुः ॥१२३॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

पुरे फाल्गुन शुक्लस्य द्वितीयायां महोत्सवात्।
रावल भीमजी सर्वसंघाभ्यां ते प्रवेशिताः ॥१२४॥
संवद्वह्निशराङ्गेन्दु-वर्षे तत्रैव सूरिणा।
चतुर्मासी कृता संघराउलात्याग्रहेण च ॥१२५॥
प्राग्वाड्वंशीय सा जोगी पुत्रसोमजिना नवं।
श्री संघपतिना राजपुरे चैत्यं विधापितम् ॥१२६॥
तेन तदा प्रतिष्ठार्थं चतुर्मास्याअनन्तरम्।
विज्ञप्ता गुरवो जग्मुस्तत्र श्री चन्द्रसूरयः ॥१२७॥
तत्र समयराजाख्य रत्ननिधान पाठकैः।
श्रीजिनसिंहसूर्याद्यनेक शिष्यैर्विराजिताः ॥१२८॥
दशम्यां माघ शुक्लस्य सोमे श्रीचन्द्रसूरयः।
आदिनाथादिबिम्बानां प्रतिष्ठां विद्धवर्राम् ॥१२६॥

युग्मम् ॥

प्रतिष्ठा समये तस्मिन् सद्भावोल्लासपूर्वकम्।
श्री संघपतिना तेन बहु द्रव्यं व्ययीकृतम् ॥१३०॥
सम्वद्वदशराङ्गेन्दु-वर्षे राजपुरे कृता।
श्री गुरुणा चतुर्मासी धर्मलाभ मवेत्य च ॥१३१॥
ततः सम्वच्छरेष्वंग चन्द्राब्दे स्तम्भने पुरे।
कृता वर्षास्थितिः श्राद्धा त्याग्रहाच्चन्द्रसूरिणा ॥१३२॥
ततो विहृत्य पूज्येन राजपुरे जनाग्रहात्।
सम्वद्रसेषु देहेन्दु- वर्षे वर्षास्थितिः कृता ॥१३३॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तस्मिनक्षणे भवत्साही सकर्मचन्द्र धीसखः।
बरहानपुरे तेन सुगुरोःस्मरणं कृतम् ॥१३४॥
ततो राजपुरं साहीसमायातः समाधिना।
कर्मचन्द्राख्य मंत्रीशस्तत्र पञ्चत्वमाप्तवान् ॥१३५॥
ततो वैशाख शुक्लस्य द्वितीयायां च सूरिणा।
समं संघेन सिद्धाद्रि-यात्रा कृताघनाशिनी ॥१३६॥
ततो विहृत्य सूरीन्द्रो गुर्जरपत्तने ऽकरोत्।
सम्वच्छैलशराङ्केन्दु-वर्षे वर्षास्थितिं गुरुः ॥१३७॥
तत्र धर्मोन्नतिर्बह्वीजाता ततो विहृत्यते।
ग्रामाणि पावयन्तः श्री-पूज्याः शिवपुरीं ययुः ॥१३८॥
तन्नरेश महाराव- सुलतान नृपेण च।
गुरुभक्तेन संघेन बह्वी भक्तिः कृता गुरोः ॥१३९॥
दशम्यां माघ शुक्लस्य तत्र पूज्यैः प्रतिष्ठितम्।
अष्टदल कजाकार-पार्श्वाऽर्हद्धातु बिम्बकम् ॥१४०॥
ततो विहृत्य सूरीन्द्रैः स्तम्भनक पुरे क्रमात्।
संवद्गजशराङ्केन्दु-वर्षे वर्षास्थितिः कृता ॥१४१॥
ततः खेट शराङ्केन्दु-वर्षे राजपुरे च तैः।
पत्तने खरसाङ्केन्दु-वर्षे वर्षास्थितिः कृता ॥१४२॥
विहृत्याथ महेवाख्य-पुरे श्रीचन्द्रसूरिणा।
कृता वर्षास्थितिः संवद्भूरसाङ्केदु वत्सरे ॥१४३॥
मार्गकृष्णस्य पंचम्यां गुरौ तत्र च सूरिणा।
विमलशान्तिनाथादि-मूर्त्तयश्च प्रतिष्ठिताः ॥१४४॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री बीकानेरवास्तव्य मुख्यश्राद्धजनाः पुनः ।
विज्ञप्तिपत्रमादाया जग्मुः सद्भक्तिशालिनः ॥१४५॥
पत्रं वितीर्यतैस्तत्र कर्तुं वर्षास्थितिं गुरोः ।
आग्रहात्प्रार्थनाकारि सा गुरुणाऽपि मानिता ॥१४६॥
ततो यात्रा कृता पूज्यैः नाकोड़ा पार्श्वसद्विभोः ।
प्रभूतधर्मकार्याणि तत्रासन्सूरिहस्ततः ॥१४७॥
पुनः कांकरिया गोत्रि-कर्मासाहादि कारिताः ।
श्री जिनचन्द्र पूज्येनाऽर्हन्मूर्त्तयः प्रतिष्ठिताः ॥१४८॥
ततो विहृत्य सूरीन्द्रो बीकानेर पुरं गताः ।
गुरोः प्रभूत कालेनागमनेनाति हर्षितैः ॥१४९॥
श्राद्धजनैर्महाराज रायसिंह समन्वितैः ।
महदाडम्बरात्पूज्य-पुः प्रवेशोत्सवः कृतः ॥१५०॥
तत्र वैशाख कृष्णैकादश्यां शुक्रे प्रतिष्ठिताः ।
श्री मुनिसुव्रताद्यर्हन्मूर्त्तयश्चन्द्रसूरिणा ॥१५१॥
जाता वर्षास्थितिस्तत्राऽक्षिरसाङ्केन्दु वत्सरे ।
गुरोः पुन र्लसद्भक्तिर्बह्वी धर्मप्रभावना ॥१५२॥
इतः कार्तिकशुक्लस्य चतुर्दश्यां च मङ्गले ।
निशायां प्राप्तवान्कालमकबर जलालदीः ॥१५३॥
प्रधानैरभिषिक्तोऽथ साहि पदे तदात्मजः ।
नूरुद्दिन्न जहांगीरो इत्याख्या सलीम इत्यऽपि ॥१५४॥
श्री खरतरसंघेन चैत्यं पुरेऽत्र कारितम् ।
शत्रुञ्जयावताराख्यं रम्यं श्री ऋषभ प्रभोः ॥१५५॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

चैत्र कृष्णस्य सप्तम्यां प्रतिष्ठा तस्य सूरिभिः ।
विहिता जिन चत्वारिंशन्मूर्त्तीनां महोत्सवात् ॥१५६॥
सम्वद्गुणाङ्गदेहेन्दुवर्षे तत्रैव सूरिणा ।
द्वितीयाऽपि चतुर्मासी कृता लाभमवेत्य च ॥१५७॥
वैशाख शुक्ल सप्तम्यां गुरौ तत्रैव सूरिणा ।
वर्द्धमान जिनेन्द्रादि मूर्त्तयश्च प्रतिष्ठिताः ॥१५८॥
गुरुणा थ चतुर्मासी लवेरइ पुरे कृता ।
संवद्वेदरसाङ्गेन्दुवर्षे श्राद्ध जनाग्रहात् ॥१५९॥
तत्र योधपुराधीश-सूरसिंहः समागतः ।
गुरुं नन्तुं गुरोर्धर्मगोष्ठ्या सोऽत्यन्तरञ्जितः ॥१६०॥
सूरिपरमभक्तोऽभूत्-स पुनस्तेन सद्गुरोः ।
स्वदेशे मान सन्मानं वर्द्धयितुं मुदाऽखिले ॥१६१॥
सुगुर्वागमने श्राद्धजनेभ्यश्च समर्पिता ।
वाजित्रवादनस्याज्ञा सर्वत्र लेख संयुता ॥१६२॥ युग्मम्
ततो विहृत्य सूरीन्द्रैः सशिष्यैर्मेडतापुरे ।
कृता वर्षास्थितिः संवद्बाणाङ्गाङ्गेन्दुवत्सरे ॥१६३॥
श्री राजनगरायातविज्ञप्त्या सूरयो ययुः ।
तत्र ततो विहृत्यागुः स्तम्भनं श्रावकाग्रहात् ॥१६४॥
तत्र रस रसाङ्गेन्दु-वर्षे वर्षास्थितिः कृता ।
पूज्यैः शैलरसाङ्गेन्दु-वर्षे राजपुरे ततः ॥१६५॥
संवद्गजरसाङ्गेन्दु-वर्षे गूर्जरपत्तने ।
कृता वर्षास्थितिः पूज्यै धर्मलाभमवेत्य तैः ॥१६६॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

वर्ष त्रयेषु चैतेषु स्थाने स्थाने च सूरिणा ।
जिनेन्द्रचैत्यचैत्यानि प्रतिष्ठितानि भूरिशः ॥१६७॥
स्व पार्श्वेथ जहाँगीरो गीतकलाविशारदम् ।
तपागण यतिं सिद्धि-चन्द्रं स्थापितवान्नृपः ॥१६८॥
एकान्ते स्नेहवार्त्तादि कुर्वन्तं स्वस्त्रिया समम् ।
तं दृष्ट्वा कुपितः साही क्षिप्तवान् बन्दिसद्मनि ॥१६९॥
पुनस्तेनेत्थमाज्ञास्व-सेवकेभ्योर्पिता च ये ।
केऽपि मद्विषये जैन-यतयः सन्ति साम्प्रतम् ॥१७०॥
तेचस्त्रीधारकाः सर्वे कर्त्तव्या अन्यथातु ते ।
प्रनिर्वास्या बलात्कारादपि मदीय देशतः ॥१७१॥
एनां निशम्य ते सर्वे पलायिता इतस्ततः ।
स्वव्रत रक्षणायागुर्नष्ट्वा केऽपि वनान्तरम् ॥१७२॥
केऽपि भूमिगृहे केऽपि गुहायां केऽपि साधवः ।
स्थिता अपर देशेषु केऽपि श्रावक सद्मनि ॥१७३॥
म्लेच्छाः पलायमानांस्तन्मध्याच्च कियतो यतीन् ।
दृष्ट्वा धृत्वा बलात्कारात्कारागृहे प्रचिक्षिपुः ॥१७४॥
जलान्नमपि नो यत्र दीयते यमिनामिति ।
भयङ्कर स्थितिर्जैनशासनहेलना जनि ॥१७५॥
आगरापुर वास्तव्यः संघो ज्ञात्वा क्षमं गुरुं ।
पत्रादाकारयामासदूरीकर्त्तुं च संकटम् ॥१७६॥
सर्वां परिस्थितिं ज्ञात्वा पत्रात्तद्रक्षितुं पुनः ।
शासन हेलनां दूरी-कर्त्तुं श्री चन्द्रसूरयः ॥१७७॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

महान्तंसाहसंकृत्वा विहृत्य मुनिभिः समम् ।
स्वल्पैरेव दिनैः प्रापुः सूरीन्द्रा आगरापुरम् ॥१७८॥
त्रिभिर्विशेषकम् ॥

साहिसभां समागत्यमिमिलुः साहिना समम् ।
साह्यपिहर्षितो दृष्ट्वा युगप्रधान सद्गुरुम् ॥१७६॥
पूज्यदर्शनमात्रेण साहिकोप उपाशमत् ।
नम्रतापूर्वकं वार्त्तां स चक्रे गुरुणा समम् ॥१८०॥
तेनोक्तं भवता वृद्धा-वस्थायां देश गुर्जरात्
गुरो कथमकार्यत्रा-गमनस्य परिश्रमम् ॥१८१॥
पूज्यःप्राह भवद्भ्योत्रा-शिषोदानार्थमागतः ।
अहं सोवगहोभाग्यमिदमेऽस्ति जगद्गुरो ॥१८२॥
भवतामियतो दूरादागमने परिश्रमम् ।
अभविष्यदतोगत्वा विश्रम्यतां च साम्प्रतम् ॥१८ ॥
पूज्यो वगधुना नास्ति विश्राम करण क्षणः ।
या भवत्फुरमानेना-शांतिर्जैने विसर्पिणी ॥१८४॥
तांनिवारियितुंमेऽत्रागमनमभवद्भवेत् ।
नैवैकस्यापराधेन दण्डितः सकलोगणः ॥१८५॥
स्व स्व कर्मवशेनात्र सर्वे भवन्ति जन्तवः ।
एक प्रकृतिवन्तो न किन्तु भिन्न स्वभाविनः ॥१८६॥
भवति कर्म वैचित्र्यात्स्खलना महतामपि ।
का कथा प्राकृतानान्तु सम्राडतो विचार्यताम् ॥१८७॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

देशेऽखिले भवद्भिर्यत्कुरमानं प्रकाशितम् ।
तत्समाकर्ण्यतां बाढं सन्मुनि कष्टदायकम् ॥१८८॥
साह्यवग् भवता प्रोक्तं यत्समीचीनमस्ति वा ।
मम विचारितं भुक्तभोगी भूयेति साधुता ॥१८९॥
पूज्यो वग् चिरकालेनाशक्त आत्मास्ति संसृतौ ।
कुटुम्ब मोह पञ्चाक्ष-विषयिक सुखादिषु ॥१९०॥
अतः स्थित्वा गृहस्थावस्थायां विषयवासनात् ।
सुदुर्लभोऽस्ति जीवानां विरक्त भावनोद्भवः ॥१९१॥
विद्यन्तेऽनादिकालेन जीवानां विषयाः प्रियाः ।
अतस्तत्साधनानां प्रागेवत्संत्य जनं वरम् ॥१९२॥
अकथि श्री जिनैर्ब्रह्मचर्यं श्रेष्टतर व्रतम् ।
तस्य पालन रक्षार्थं नवधा वाटिकापुनः ॥१९३॥
पाल्यते येन निर्विघ्न-तया तत्सुखपूर्वकम् ।
तत्स्खलनापि नैवस्यात् कदाचिदपि तद्यथा ॥१९४॥
यत्र स्त्रीनृ पशु क्लीव-युक्त वसति वर्जनम् ।
साधूनां तिष्टनं स्त्रीणां स्थाने घटि द्वयादनु ॥१९५॥
विषयिक विकाराणां जाग्रती वृद्धिकाः कथाः ।
वक्तुं श्रोतुं लसच्छीलधारिणां नैव युज्यते ॥१९६॥
यत्र भित्त्यन्तर स्थायि दम्पति र्विदधाति च ।
कामक्रीडादिकं तत्र स्थातुं श्रोतुं न कल्पते ॥१९७॥
न पूर्व भुक्त भोगानां कर्त्तव्यं स्मरणं पुनः ।
कामोद्दीपक सस्निग्धाहारादि ब्रह्मचारिणाम् ॥१९८॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

दृष्टव्यः कोऽपिनानारी न च सराग दृष्टिना ।
ऊनोदरि तपः कार्यं सर्वदा शीलधारिणा ॥१९९॥
त्यागो देहविभूषायाः कार्यस्ततो नरेश्वर ।
भवद्भिः स्वयमेवस्व चित्ते विचार्य पश्यताम् ॥२००॥
पूर्वोक्तानां प्रतिज्ञाना मासां निर्वाहको मुनिः ।
ज्ञाता पायान पायः स्वाचार च्युतः कथंभवेत् ॥२०१॥
ये भ्रष्टास्तेयथावत्तत्प्रतिज्ञानामपालनात् ।
जिनमतेऽपि ते निंद्या इतर स्मिन्तु का कथा ॥२०२॥
धिग् पात्राणि तेऽत्रस्यु जिनशासन खिंसकाः ।
अवन्द्यास्तैः समं कोऽपि संसर्गं प्रकरोति नः ॥२०३॥
सर्व साधु वतो श्रद्धां लात्वा तत्कष्ट पातनम् ।
नोचित मस्ति भूपानां नीतिविदां भवादृशाम् ॥२०४॥
साही जगाद मे राज्ये स्वेच्छया जैन साधवः ।
विचरन्तु सदा कस्य को न विघ्नं करिष्यति ॥२०५॥
सूरिणावादि यद्येवं तर्हि शीघ्रंहि साधवः ।
मुच्यन्तां पतिताः कारागृहे निरपराधिनः ॥२०६॥
आयत्य प्रतिबन्धत्व साधुविचरणाय च ।
सर्वत्र फुरमानानि प्रेष्यंतां हे नरेश्वर ! ॥२०७॥
साहिना वादि हे पूज्या एवमेव भविष्यति ।
निश्चितं भवता स्थेयं दातव्यं दर्शनं पुनः ॥२०८॥
वार्त्तालापं विधायैवं स्वस्थानं सूरयो गताः ।
सर्वत्र फुरमानानि प्रकाशितानि साहिना ॥२०९॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

ततो जहर्ष संघोऽपि संघाग्रह्रेण सूरिणा ।
चतुर्मासी कृता तत्रां कांगाङ्क चन्द्र वत्सरे ॥२१०॥

ख्यातिं गतः स च सवाइ युगप्रधान,
इत्याख्ययात्र सुगुरुर्जिनचन्द्रसूरिः ।
आपत्पतन्मुनि समुद्धरण प्रवीण-
जैनेन्द्र शासन समुन्नति कारणत्वात् ॥२११॥

यदागरापुरंसूरि र्गतः श्रुतोजगद्गुरोः ।
आगमन समाचारो श्रीजहांगीर साहिना ॥२१२॥
तदातेन निजाज्ञाया भङ्गोनस्यादतो गुरोः ।
एवं कथायितंराज-पथागन्तव्य मत्र न ॥२१३॥
लोकोत्तराध्वनाकित्वा-गन्तव्य भवता तदा ।
धर्म प्रभावनां कर्त्तुं सूरयोमन्त्रशक्तितः ॥२१४॥
कंबलं यमुना नद्यां संविस्तार्योपविश्य च ।
तत्र गत्वा सरित्पारं मिलिताः साहिना समम् ॥२१५॥युग्मम्॥
तस्येमामद्भुतांशक्ति दृष्ट्वा साही प्रहर्षितः ।
ददौ प्रभूतसन्मान मासनादि समर्पणात् ॥२१६॥
कासीस्थ पण्डितान्जीत्वैकोभट्ट आगरापुरे ।
जहांगीर सभांविद्वद्वरोन्यदा समागमत् ॥२१७॥
गर्वेण तेन वादार्थं तस्या मुद्घोषणा कृता ।
तदा तेन समंसूरिः साहिना कथि तत् क्षमः ॥२१८॥
सूरिणापिनिजासाधारणविद्वत्तयाच स ।
जितस्ततो गतः ख्यातिं भट्टारकतया गुरुः ॥२१९॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तत्प्रभावेन सर्वत्राऽत्यन्त धर्मप्रभावना ।
तत्रसङ्घे भवद्धर्म-सत्कृत्याद्यधिकाधिकम् ।।२२०।।
ततो जगामसूरीन्द्रो मेड़तापुरमाकुलम् ।
राजमान्य धनि श्रेष्ठयासकरणाद्युपासकैः ।।२२१।।
तत्र श्राद्धेषु जातानि परम भक्तिशालिषु ।
प्रभूत धर्मकार्याणि सूरिराज समागमात् ।।२२२।।
निशम्य मेड़ताद्रङ्गा-गमनं सुगुरोस्तदा ।
बेनातट स्थितः संघोऽत्यन्त हर्षितो जनि ।।२२३।।
एकत्रो भूय संघेन तेनाऽत्र तत्ववेदिना ।
कारयितुंगुरो र्वर्षास्थितिं कृत्वा विचारणा ।।२२४।।
संघ प्रतिष्ठितश्राद्धजनाः श्रीमेडतापुरम् ।
गत्वा विज्ञपयामासुस्तदर्थं सुगुरुं भृशम् ।।२२५।।
ततः सुमतिकल्लोल-पुण्यप्रधानपाठकैः ।
मुनि श्रीवल्लभाम्यादि-पालादि मुनिभिः समम् ।।२२६।।
बेनातटंपुरं जग्मुः श्रीजिनचन्द्रसूरयः ।
तत्र श्राद्ध जनैर्भक्त्या प्रवेशिता महोत्सवात् ।।२२७।।युग्मम्।।
तत्र नभाश्वदेहेन्दु-वर्षेवर्षास्थितिः कृता ।
श्रीजिनसिंहसूर्यादि-मुनिभिः सह सूरिणा ।।२२८।।
श्राद्ध गणोऽपि धर्मिष्टः सूरिराज विराजनात् ।
सामायिकादि सुश्राद्धानुष्ठाने सुरतो जनि ।।२२९।।
पुनर्मुनि गणोध्याने स्वाध्याये वरसंयमे ।
तपश्चर्यादि साध्वानुष्ठाने लीनो भवद्भृशम् ।।२३०।।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रीपर्यूषण घस्रेषु किं वाच्य मथ सूरिणा।
निजायु र्निकटं ज्ञात्वा चिह्न ज्ञानोपयोगतः ॥२३१॥

शिष्येभ्यो दायि शिक्षेत्थं शासनोन्नतिनासमम्।
आत्मोन्नतौ सदाकार्या प्रवृत्तिर्भो विचक्षणाः ॥२३२॥

गच्छभारो मया दायि श्रीजिनसिंहसूरये।
तस्याज्ञायां च युष्माभि र्वर्तितव्यं सदैवभोः ॥२३३॥

श्राद्ध श्राद्धी जनेभ्योऽपि हितशिक्षोचितार्पिता।
पुनश्चतुर्विधः संघः क्षामितः सूरिणा त्रिधा ॥२३४॥

देश देशान्तरे पत्र-द्वारेणक्षामितोऽखिलः।
संघोऽनुवन्दनाधर्मलाभादि पूर्वकं पुनः ॥२३५॥

क्षामिता जन्तवः सर्वे पापनिन्दा पुनः पुनः।
पुण्यानुमोदना तेन कृता सभावयन्निदम् ॥२३६॥

आप्तोऽष्टादश दोषशून्य जिनपश्चार्हन्सुदेवो मम,
त्यक्तारम्भ परिग्रहः सुविहितो वाचंयमः सद्गुरुः॥
धर्मः केवलि भाषितो वरदयः कल्याणहेतुः पुन-
रर्हत्सिद्ध सुसाधु धर्मशरणं भूयात्त्रिशुद्ध्या भवम् ॥२३७॥

भूतानागत वर्त्तमान समये यद् दुष्प्रयुक्तैर्मनो—
वाक्कायैः कृतकारितानुमतिभि र्देवादितत्त्वत्रये।
संघे प्राणिषु चाप्त वाच्यनुचितं हिंसादि पापास्पदम्,
मोहान्धेन मया कृतं तदधुना गर्हामि निन्दाम्यऽहम् ॥२३८॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अर्हत्सिद्ध गणीन्द्र पाठक मुनि श्राद्धाव्रति श्रावका-
द्यर्हत्त्वादिक भावतद्गत गुणान् मार्गानुसारीन् गुणान्
श्रीअर्हद्वचनानुसारि सुकृतानुष्ठान सद्दर्शन—
ज्ञानादीननुमोदयामि सुहितै र्योगैः प्रशंसाम्यहम् ॥२३६॥
संसारेऽत्र मयास्वकर्मवशगा जीवाभ्रमन्तोऽखिलाः,
क्षाम्यन्ते क्षमिताः क्षमन्तुमपि ते केनाऽपि सार्द्धं मम ।
वैरं नास्ति च मैत्रितास्ति सुखदा जीवेषु सर्वेषु मे;
यद्दुश्चिन्तित भाषित प्रविहितं मिथ्यास्तु तद्दुष्कृतम् ॥२४०
यश्चायास्यति मे कदा दिनमहं यत्पालयिष्येऽमलं,
चारित्रं जिनशासनं गत मुने र्मार्गं चरिष्याम्यऽहम् ।
मुक्तो जन्मजरादि दुःख निवहात्संवेग निर्वेदता—
प्रोक्तास्तिक्य दयालुता प्रशमता धर्ता भविष्याम्यऽहम् ॥२४१॥
निर्ममोन्ते स्मरन् पञ्च नमस्कारं पुनः पुनः ।
कृत्वा पुन श्चतुर्यामानशनं सुसमाधिना ॥२४२॥
निज पौद्गलिकं देहं त्यक्त्वा जगद्गुरु र्दिवम् ।
आश्विनकृष्णपक्षस्य द्वितीयायां तिथौगतः ॥२४३॥ युग्मम्॥
विलीनं तज्जगज्ज्योतिः सदार्थमजनीदृशाः ।
दुर्दैव कराल कालेन नत्यक्ताः सन्नरा अपि ॥२४४॥
सर्वानित्य तयाद्यस्य स्पष्ट परिचयोर्पितः ।
सुन्दर पूज्य देहेन रूक्षोत्तरः सदैव च ॥२४५॥
दीप्र ज्ञान प्रदीपः सो-स्तं नीतः कालवायुना ।
सर्वदार्थ मदृश्या भूत्साच तेजोमयी प्रभा ॥२४६॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

हाहाकार विषादाभ्याच्छादितौ विषयेऽखिले।
दिने सत्यपि सर्वत्र तमो भूतमिवा जनि ॥२४७॥
श्रीगुरु विरह ज्वाला लोकानां हृदयोत्थिता।
अश्रुरूपेण नेत्रेभ्यो दारुणानिर्गता बहिः ॥२४८॥
साश्रुका समये तस्मिन् शोच्यां दशाङ्गता जनाः।
सर्वेम्लानमुखी भूय निर्मग्नाशोक सागरे ॥२४९॥
सूरेरन्तः क्रियां कर्त्तुं संघेन सुन्दराकृतिम्।
विमानं कारयित्वा तच्छवं प्रक्षाल्य वारिणा ॥२५०॥
तस्य विलेपनं कृत्वा चन्दनादि सुवस्तुभिः।
स्थापयित्वा विमाने तं सुगन्धि धूप पूर्वकम् ॥२५१॥
द्रव्योच्छालन वाजित्र-नादाद्युत्सव पूर्वकम्।
नीयमानाः शवंग्राम-मध्यमध्येन च क्रमात् ॥२५२॥
बाणागङ्गातटासन्ने जना शुद्ध रसातले।
चक्रुस्तस्याग्नि संस्कारं सच्चन्दन घृतादिभिः ॥२५३॥
गुरोरतिशयाद्देहे दग्धेऽपि मुखवस्त्रिका।
न दग्धा हर्षिताः सर्वे त आश्चर्यं विलोक्यतत् ॥२५४॥
गुरु गुणान्स्मरन्तो थ गुरुविरह दुःखिताः।
निरोत्साहा निरानन्दाः स्व स्व गृहं ययुर्जनाः ॥२५५॥
यत्र गुर्वग्नि संस्कार मभूत्तत्र विधापितम्।
तत्रत्येन सुसंघेन गुरोः स्तूपं वराकृतिम् ॥२५६॥
श्री सिंहसूरिभिस्तत्र ख मुनि रसेन्दुवत्सरे।
दशम्यां मार्ग शुक्लस्य तत्पादुका प्रतिष्ठिता ॥२५७॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अद्ययावद्गुरोरस्य देशेषु गुर्जरादिषु ।
चरणपादुकाः सन्ति सप्रभावेप्सितप्रदाः ॥२५८॥

पूजायात्रादिकं तत्स्व-स्तिथि दिने प्रजायते ।
राजनगर मुम्बापु-र्भरुच्छपत्तनादिषु ॥२५९॥

अद्ययावद्गुरुर्जीव न्नेवास्तेत्र रसातले ।
अविनश्वर पांडुरा-भिधान कीर्तिजीवनात् ॥२६०॥

राजेश साह्यकबर प्रतिबोधकस्य,
श्रीजैन शासन समुन्नति कारकस्य ।
श्रीमज्जगद्गुरु सवाइ युगप्रधान-
भट्टारकस्य चरिते जिनचन्द्रसूरेः ॥२६१॥

इति श्री सवाई युगप्रधान भट्टारक श्री जिनचन्द्रसूरि चरिते संकट पतित साधु समुद्धरण स्वर्गगमनादि वर्णनात्मक श्चतुर्थः सर्गः समाप्तः ॥

—o—

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ पञ्चमः सर्गः

इदृशाः सन्नरा लोके सुदुर्लभा भवन्ति हि ।
येषां कथन कर्त्तव्य-द्वय तुल्यं भवेत्सदा ॥१॥

प्रजल्पका सदालोके लभ्यन्ते प्रचुरा नराः ।
किन्त्वल्पाहि क्रियानिष्ठा उदाराः सच्चरित्रिणः ॥२॥

स्वयमेतै गुणैराढ्या ये भवन्त्यपरेष्वपि ।
तेषां महाप्रभावश्च पतत्याश्चर्यकारकः ॥३॥

यो जिनचन्द्रसूरीन्द्रो महा विद्वान्यथाभवत् ।
तेथैव शुद्धदुर्द्धर्ष-चारित्रपालनाग्रणीः ॥४॥

यश्च कृत्वा क्रियोद्धारं सूरिपदाप्त्यनन्तरम् ।
बभूव सुदृढोत्कृष्ट-व्रतपालन तत्परः ॥५॥

उत्तरोत्तर संवृद्धिं स गतस्तत्प्रभावतः ।
येन सहस्रशो जीवाः सन्मार्गे स्थापिताः पुनः ॥६॥

पुनस्तस्योपदेशेन शतशोभव्य जन्तवः ।
ललुः संसारसंहारि-साधुश्राद्धव्रतानि च ॥७॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

येन सहस्रशोग्रन्थान् विलेख्य स्थापिताश्च ते ।
ज्ञानकोषे श्रुतज्ञान-चिरस्थायि विरक्षितुम् ।।८।।
येन नूतन जैनेन्द्र-चैत्यचैत्यानि भूरिशः ।
प्रतिष्ठितानि सर्वत्र धर्मवृद्धि विधायिना ।।९।।
धार्मिक सप्त क्षेत्रेषु सुस्थानेष्वपरेष्वपि ।
कोटिशः,सूरिणायेन द्रव्यव्ययो विधायितः ।।१०।।
कठिनादपि काठिन्यं सत्कार्यमपि धार्मिकम् ।
सफलं सुलभत्वेन संजज्ञे यत्प्रभावतः ।।११।।
सम्राज्जलालदीसम्राज्जहाँगीरादयो भवन् ।
मुग्धायस्य सुचारित्रतेजोमय प्रभावतः ।।१२।।
यस्य शिष्य प्रशिष्यादिगणोभूच्छिष्टिकारकः ।
द्विसहस्राधिकः स्वान्यशास्त्रज्ञः सुविशारदः ।।१३।।
पंचनवति शिष्यादि शाखान्तरस्थ साधुभिः ।
साध्वीभिर्यो रराजोच्चै श्चन्द्रस्तारागणैरिव ।।१४।।
तत्कतिपय साधूनामधिकारोऽत्र कथ्यते ।
गणी सकलचन्द्राख्य आद्य शिष्यो गुरोरभूत् ।।१५।।
सोऽयं रीहड़ गोत्रीयः प्रगृहीत मुनिव्रतः ।
क्रमाज्जातो महाविद्वान् सर्वशास्त्रविशारदः ।।१६।।
जङ्गल देश नालाख्य-ग्रामेतत्पादपादुका ।
अद्यापि विद्यमानास्ति चन्द्रसूरि प्रतिष्ठिता ।।१७।।
महोपाध्याय सुख्यात कविश्रेष्ठ विशारदः ।
सकलचन्द्र शिष्यो भूद्गणि समयसुन्दरः ।।१८।।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अस्य साचोर वास्तव्य-प्रागवाड वंश संभवः।
रूपसी जनकोमाता लीलादेव्यभवद्वरा ।।१९।।
संसारासारतां ज्ञात्वा वैराग्यरङ्ग वासितः।
लघु वयसि चारित्रं सूरि पार्श्वाल्ललौ सकः ।।२०।।
अस्य महिमराजाख्य-समयराज वाचकौ।
प्रतिभाशालिनो विद्यागुरु बभूवतुः पुनः ।।२१।।
सम्वन्नन्द युगाङ्केन्दु-वर्षे लाभपुरे वरे।
राजसंसदि येनाष्टलक्षीरश्राविधीमता ।।२२।।
पुनःफाल्गुन शुक्लस्य द्वितीयायांशुभेक्षणे।
वाचकाख्य पदंयस्मै श्रीचन्द्रसूरिणार्पितम् ।।२३।।
विबोध्य सिन्धुदेशेसौ मखनूमाख्य शेखकम्।
पंचनदीजलोत्पन्न-जन्तूनगाः समरक्षयत् ।।२४।।
जेसलमेरु दुर्गेश भीमजी रावलं पुनः।
समुपदिश्य मीणेभ्यः सांडान् जीवान् ररक्षयः ।।२५।।
विबोध्य मेड़तामण्डोवर भूमिपती पुनः।
जिनशासन शोभां यो वर्द्धयामास चा तुलां ।।२६।।
चन्द्राश्वरस चन्द्राब्दे लवेराख्य पुरे पुनः।
उपाध्याय पदंप्राप्तो यो जिनसिंहसूरितः ।।२७।।
नग गजाङ्क चन्द्राब्दाद्यावद्वर्ष द्वयं पुनः।
दुष्काल पतनात्साधु शिथीलत्वं समागतम् ।।२८।।
शिथीलत्वं परित्यज्येलांकाङ्क चंद्रवत्सरे।
यो विधाय क्रियोद्धारं संविज्ञपथमाश्रितः ।।२९।।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

संस्कृत गद्य पद्यात्म-ग्रन्था अनेन भूरिशः ।
स्वाध्यायस्तव रासाद्या भाषात्मकाः प्रचक्रिरे ॥३०॥

श्रीराजनगरे युग्म-शून्य मुनीन्दुवत्सरे ।
चैत्र शुक्ल त्रयोदश्यां यश्च सुरालयं गतः ॥३१॥

अस्य च अष्टलक्षी, भावशतको, विशेषशतको, बिचार शतको, रूपकमालायाश्चूर्णी वृत्तिश्च चतुर्मासि व्याख्यान पद्धतिः कालिकाचार्यकथा, समाचारीशतको, विषंवादशतको, बिशेषसंग्रहः, कल्पलतावृत्तिः, गाथालक्षणम्, गुर्वावलिः श्राद्धद्वादशव्रतकुलकम्, दुरियर वृत्तिः यात्याराधना, गाथा-सहस्री. जयतिहुअणवृत्तिः दुष्कालवर्ण श्लोकः भक्तामर वृत्तिः कल्याणमन्दिरवृत्तिः दशवैकालिकवृत्तिः रघुवंशवृत्तिः नवतत्त्वटबार्थ वृत्तिः राजधान्यां दुःखितगुरुवचनम् सन्देह-दोलावलीपर्यायः, वृत्तरत्नाकरवृत्तिः सप्तस्मरणवृत्तिः सारस्वतरहस्यः सानिट्धातुः खरतरगच्छपट्टावली, विमल यमलस्तुतिवृत्तिः अल्पाबहुत्वगर्भितस्तवः - स्वोपज्ञ वृत्तिश्च ऋषभभक्तामरः द्रौपदीसंहरणं महावीर सप्तविंशतिभवः षडावश्यक बालावबोधः प्रश्नोत्तर विचारः वाग्भटालंकारवृत्तिः भोजनविच्छुत्तिः दण्डकवृत्तिः जिनकुशलसूर्यष्टक ।

तथा च शाम्बप्रद्युम्न चतुष्पदी, पुण्यसार चतुष्पदी, नलदमयन्ती चतुष्पदी, सीताराम चतुष्पदी, चम्पकश्रेष्ठि

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

चतुष्पदी, द्रौपदीचतुष्पदी, थावच्चासुत चतुष्पदी, गौतमपृच्छा चतुष्पदी, जिनदत्त चतुष्पदी, करकण्डु प्रत्येकबुद्धरासः द्विमुख-प्रत्येकबुद्धरासः, नमिराजर्षि प्रत्येकबुद्धरासः नग्गइ प्रत्येकबुद्ध-रासः जम्बूस्वामिरासः सिंहलसुत प्रियमेलक रासः वल्कल-चीरि रासः शत्रुञ्जयरासः वस्तुपाल तेजपाल रासः द्वादशव्रत रासः क्षुल्लककुमाररासः पुञ्जर्षिरासः कर्मषट्त्रिंशिका, पुण्यषट्त्रिंशिका, शीलषट्त्रिंशिका, सन्तोषषट्त्रिंशिका, आलोयणाषट्त्रिंशिका, सवैयाषट्त्रिंशिका, नववाटिका शीलस्वाध्यायः, स्थूलभद्र स्वाध्यायः सप्तचत्वारिंशद्दोष स्वाध्यायः, साधुवन्दना, चतुर्विंशति जिन-चतुर्विंशति-गुरु नाम गर्भित पार्श्वनाथस्तवनम्, चतुर्विंशतिजिन चतुर्विंशति स्तवनानि जिनचन्द्रसूरिगीतम्, सप्तविंशति राग गर्भिताक्षय तृतीया स्तवनम् अर्बुदाचलतीर्थ यात्रा स्तवनम्, चैत्रीयपूर्णिमा शत्रुंजययात्रास्तवनम्, सकलतीर्थयात्रा स्तवनम्, पार्श्वनाथ स्तवनम्, घांघाणीतीर्थ पद्मप्रभ स्तवनम्, पौषधविधि स्तवनम्, श्रावकाराधनास्तवनम्, आलोयणास्तवनम्, अर्बुदस्तवनम्, राणकपुरयात्रास्तवनम्, महावीर स्तवनम्, गणधरवसहि स्तवनम्, मौनेकादशीस्तवनम्, लौद्रवपुरयात्रास्तवनम्, आदिनाथ स्तवनम्, सीमंधर जिनस्तवनम् इत्याद्यनेक कृतय उपलभ्यन्ते ।

उपाध्याय कविश्रेष्ठ समयसुन्दरस्य च ।
विद्वांसो बहवः शिष्या आसन्सिद्धान्त पारगा ॥३२॥
तन्मध्यादभवत्तस्य शिष्यो विद्वान्विचक्षणः ।
न्यायादि शास्त्रविज्ञाता श्री वादि हर्षनन्दनः ॥३ ॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

चिन्तामणिमहाभाष्य तुल्या ग्रन्थाः सुदुर्गमाः।
अधीता हेलयायेन स्वेद्धबुद्धि प्रकर्षतः ॥३४॥

अस्य मध्यान्हव्याख्यानपद्धतिः ऋषिमण्डलवृत्तिः, आदिनाथव्याख्यानम्, वाचक सुमतिकल्लोलमुनिना सार्द्धं उत्तराध्ययनवृत्ति, शत्रुञ्जययात्रापरिपाटी स्तवनम् गौड़ी स्तवनम्, गहुलिका, आचारदिनकरप्रशस्तिरित्याद्यनेक कृतय उपलभ्यते।

शिष्यो नयविलासाख्यो भूज्जिनचंद्र सद्गुरोः।
श्रीलोकनालिका बालावबोधंयोकरोत्पुनः ॥३५॥

शिष्यो ज्ञानविलासाख्यो भूज्जिनचन्द्र सद्गुरोः।
श्री समयप्रमोदाख्यो स्यापि शिष्यो महामतिः ॥३६॥

अस्य च जिनचन्द्रसूरि निर्वाणरासः पुनर्गीतम्, चतुष्पर्वी चतुष्पदी, अभयदेवसूरि कृत साहम्मिकुलक टबार्थ इत्यादि कृतय उपलभ्यन्ते।

आसन् ज्ञानविलासस्य परेपि लब्धिशेखराः।
श्रीज्ञानविमलाः शिष्या नयनकलशादयः ॥३७॥

हर्षविमल शिष्योभूत् श्रीजिनचन्द्र सद्गुरोः।
एतस्यापि महाविद्वान् शिष्यः श्रीसुन्दराभिधः ॥३८॥

एतत्कृतागडदत्तप्रबन्ध उपलभ्यते।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

कल्याणकमलः शिष्यो भूज्जिनचन्द्र सद्गुरोः।
दशाधायति धर्मस्य प्रतिपालन तत्परः ॥३९॥

अस्य च श्रीजिनप्रभसूरि कृत षड्भाषास्तवनावचूरी, सनत्कुमार चतुष्पदी इत्यादि कृतय उपलभ्यन्ते।

वाचकः सूरि शिष्यो भू त्तिलककमलाभिधः।
गोलेच्छा गोत्रि तच्छिष्यः पद्महेमाख्य वाचकः ॥४०॥

अनेन गूर्जर पत्तने श्रीवाड़ीपार्श्वनाथस्य मुलताने श्रीजिनदत्तसूरिस्तूपस्य प्रतिष्ठा कृताच।

शिष्या अस्या भवन्राज-दाननिलयसुन्दराः।
नेमसुन्दरानंदवर्द्धन हर्षराजकाः ॥४१॥
वाचक दानराजस्या भूद्वीरकीर्ति वाचकः।
शिष्यो दिवंगत सोंक कर मुनीन्दु वत्सरे ॥४२॥
तच्छिष्यौ राजहर्षाख्य मतिहर्षाख्य वाचकौ।
श्रीराजहर्ष शिष्यो भू द्राजलाभाख्य वाचकः ॥४३॥

अस्य च धन्ना-शालिभद्र चतुष्पदी भद्रानंदसन्धिरित्यादि कृतय उपलभ्यन्ते।

गुणभद्र क्षमाधीर राजसुन्दर वाचकाः।
आसन्नयणरङ्गादि शिष्या अस्य विशारदाः ॥४४॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

वाचक मतिहर्षस्य द्वौ शिष्यौ मुनिसत्तमौ ।
श्रीमन्महिममाणिक्य भवनलाभवाचकौ ॥४५॥
श्रीचन्द्रसूरि शिष्यो भून्नयन कमलाभिधः ।
श्रीजयमन्दिरोस्यास्य कनककीर्त्ति वाचक ॥४६॥

अस्य च नेमिनाथरासः द्रोपदीरासः इत्यादि कृतय उपलभ्यन्ते ।

श्री जिनसिंहसूरीन्द्रो भूच्छिष्यश्चन्द्र सद्गुरोः ।
पितास्य चाँपसीसाह श्चांपलदे प्रसूर्वरा ॥४७॥
अस्य जन्मा भवद्बाण चन्द्राङ्क चन्द्र वत्सरे ।
मार्गशुक्लस्य राकायां ग्रामेखेतासराभिधे ॥४८॥
मानसिंहोस्य नामा भू द्वर्द्धमानो दिनेदिने ।
क्रमात्कला कलापज्ञो जातो सावष्ट वार्षिकः ॥४९॥
वीकानेर पुरेथासौ वैराग्य रङ्ग वासितः ।
सम्वद्वह्निकराङ्केन्दु वर्षे दीक्षालल्लौ महान् ॥५०॥
श्री जिनचन्द्रसूरीन्द्र शिष्यत्वेनाभवत्सकः ।
महिमराज नाम्नासौ प्रसिद्धि प्रगतो गणे ॥५१॥
विद्वन्निर्मल चारित्र विनयादिगुणास्पदम् ।
तं ज्ञात्वा गुरुणा योगान्वाहयित्वाऽखिलानपि ॥५२॥
तस्मै जैसलमेरौ खवेदाङ्क चन्द्रवत्सरे ।
माघशुक्लस्य पञ्चम्यां वाचक पदमर्पितम् ॥५३॥ युग्मम्॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अकबरस्य विज्ञप्तिपत्रेण चन्द्रसूरिणा ।
षड्साधुभिः समंचासौ प्रेषितः साहिपर्षदि ॥५४॥
अस्य दर्शनमात्रेण सम्राडानन्दितोऽभवत् ।
साहीतेन समंधर्मचर्चां नित्यमचीकरत् ॥५५॥
सलीम युवराजस्य मूलभे भूत्सुतायदा ।
तदा तद्दोष घाताय शान्तिस्नात्रं च कारयः ।।५६॥
गुर्वाज्ञया विहृत्यासौ महिमराज वाचकः ।
काश्मीरे साहिना सार्द्धं चक्रे धर्मोन्नतिं भृशम् ॥५७॥
गजनी गोलकुण्डादि देशेष्वमारि घोषणाम् ।
मार्गायात तडागेष्वकारयत्साहि पार्श्वतः ॥५८॥
साहिना मुपदेश्याष्ट दिनं यावददापयत् ।
असौ श्रीनगरे जीवा भयदाऽमारि घोषणाम् ॥५९॥
नित्यं परिचयादस्य साहि निपतितो महान् ।
प्रभावेऽथ गुरोःपार्श्वं क्रमादसौ समागतः ॥६०॥
साहिनाथ प्रसन्नेन सूरि पदं प्रदापितम् ।
श्री जिनसिंहसूरिश्च नाम सुगुरु पार्श्वतः ॥६१॥
असौ स्वगुरुणा सार्द्धं चतुर्मासी तदाज्ञया ।
चकारान्यत्र वा जैन-धर्मोन्नति चिकीर्षया ॥६२॥
श्री वीकानेर वास्तव्य बोत्थरागोत्रि धर्मसीः ।
तस्य धारलदेवीस्त्री राजसिंह स्तयो सुतः ॥६३॥
सम्वद्रसेषु देहेन्दु वर्षे मार्गार्जुनस्य च ।
त्रयोदश्यां ललौदीक्षां राजसिंहो महोत्सवात् ॥६४॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री जिनचन्द्रसूरीन्द्र पार्श्वादसावदापयत् ।
दीक्षां च वृहतीं तस्य राजसमुद्र नामकम् ॥६५॥
श्री बीकानेर वास्तव्य वच्छराज स्तु तत्प्रिया ।
मृगादेवी तयोः पुत्रौ विक्रम चोलकाभिधौ ॥६६॥
मात्रा भ्रात्रा समंचोलो भू रसाङ्कन्दु वत्सरे ।
सप्तम्यां माघशुक्लस्य दीक्षाललौ महोत्सवात् ॥६७॥
श्रीमाल थानसिंहेन तेषां दीक्षोत्सवः कृतः ।
राजपुरे वृहद्दीक्षा जाता श्रीचन्द्रसूरितः ॥६८॥
चोलस्य सिद्धसेनाख्या भूज्जिनसिंहसद्‌गुरोः ।
राजसमुद्र सिद्धादि सेनौ पट्टधराविमौ ॥६९॥
श्री जिनराजसूरीन्द्र सूरीन्द्र जिनसागरौ ।
इतिनाम्ना क्रमात्ख्यातिं गतौ द्वौ तौ रसातले ॥७०॥
आषाढाष्टान्हिकायाय-त्फुरमानं च साहिना ।
पुराकिलार्पितं चन्द्र-सूरये गमितं च तत् ॥७१॥
साहिपार्श्वात्पुनः संवद्भूरसाङ्केन्दु वत्सरे ।
संप्राप्तं नूतनं तच्च श्री जिनसिंहसूरिणा ॥७२॥
वीकानेरे समं चासौ श्री जिनचन्द्रसूरिणा ।
ऋषभदेव चैत्यस्य प्रतिष्ठासमयेभवत् ॥७३॥
सुप्रसिद्ध कवि श्रेष्ठ समयसुन्दरस्य च ।
असौ विद्यागुरुर्दातो-पाध्यायाख्य पदस्य च ॥७४॥
प्रतिबोध्य जहाँगीरं-यः स्वप्रतिभाया पुनः ।
अमारिघोषणां दापयामासाभयदायिनीम् ॥७५॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रसन्नीभूय संप्रेष्य श्रीजहाँगीर साहिना ।
श्री मुकरबखानाख्य नबाबं शिष्टिकारकम् ॥७६॥

गुरु परम्परायातं पितृदत्तं महोत्सवात् ।
दत्तं युगप्रधानाख्य पदं श्री सिंहसूरये ॥७७॥ युग्मम् ॥

संवत्ख शैल देहेन्दु वर्षे बेनातटे पुरे ।
चतुर्मासी कृतायेन स्वगुरुणासमं पुनः ॥७८॥

ततः परमसौ प्राप्य श्री गच्छ नायकास्पदम् ।
भव्यान् विबोधयन् पृथ्वी-मण्डले विजहार च ॥७९॥

मेडतापुर वास्तव्य-चोपड़ा गोत्रिणापुनः ।
साहासकरण श्राद्धो-त्तमेन धर्मवेदिना ॥८०॥

शत्रुञ्जय महातीर्थ-यात्रार्थं सूरिणासमम् ।
श्रीसंघे प्रगुणीकृत्य महान्तंभाव पूर्वकम् ॥८१॥

आद्यप्रथाणकं संवद्-भू शैलाङ्गेन्दु वत्सरे ।
पौष शुक्ल त्रयोदश्यां शुभेक्षणेततः कृतम् ॥८२॥

त्रिभिर्विशेषकम्॥

बीकानेर समायातो महान् संघोप्यनेन च ।
श्रीसंघेन समं गूडा-ग्रामे सम्मिलितो चलन् ॥८३॥

देवदर्शनपूजादि कुर्वन् ग्राम पुरादिषु ।
सचाबुर्दादि सत्तीर्थ-यात्रां सद्भाव वासितः ॥८४॥

चैत्रशुक्लस्य राकायां शत्रुञ्जय महागिरेः ।
यात्रां कृत्वा निजात्मानं सफली विदधे भृशम् ॥८५॥युग्मम्॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

त्रासकरणाय श्रीजिनसिंहाख्यसूरिणा ।
संघपति पदंदत्तं मालारोहण पूर्वकम् ॥८६॥
ततो विहृत्य सूरीन्द्रः श्रीस्तम्भनपुरं गतः ।
तत्र श्रीपार्श्वनाथस्य चकार दर्शनमुदा ॥८७॥
ततोऽसौ विहरन् राजनगर पत्तनादिषु ।
आगतो वडल ग्रामं श्राद्धजन समाकुलम् ॥८८॥
तत्र श्री दत्तसूरीन्द्र पादुकाद्वय दर्शनम् ।
कृत्वा ततो विहृत्यासौ शिवपुरीं समागतः ॥८९॥
समुदितेन संघेन प्रवेशितो महोत्सवात् ।
तदीशराजसिंहेनात्यन्तंभक्तिः कृतागुरोः ॥९०॥
सोथ विहृत्यजालोर मागतः स्वागतः कृतः ।
गुरो स्तत्रत्य संघेन घांघाणीमगमत्ततः ॥९१॥
वीकानेरं ततः सोगा त्पुःप्रवेशोत्सवः कृतः ।
तत्रत्य वाघमल्लेन श्रीजिनसिंह सद्गुरो ॥९२॥
वेदशैलाङ्क चन्द्राब्दे तत्रवर्षास्थितिः कृता ।
तेनाभूत्तत्प्रभावेन बह्वीधर्म प्रभावना ॥९३॥
इतः सम्राज्जहाँगीरो भूद्दर्शनाभिलाषुकः ।
गुरो र्विवेद सूरीन्द्रं बीकानेर स्थितं गुरुम् ॥९४॥
तेनाऽत्र दर्शनंदातुं विज्ञप्ति पत्र पूर्वकम् ।
गुरवे प्रेषितास्तत्र प्रधान पुरुषावरा ॥९५॥
आगत्यतेऽपि विज्ञप्ति पत्रं समर्प्यसूरये ।
विज्ञप्तिं विदधुस्तत्रागन्तुं सुबहुमानतः ॥९६॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

एकत्रीभूयतत्रत्य संघोप्यानन्दितो भवत् ।
पठित्वा साहिविज्ञप्ति पत्रमाग्रह सूचकम् ॥९७॥
अवेत्य सूरिराजोप्या ग्रहंश्रीपति साहिनः ।
तत्र गन्तुं चतुर्मास्यनन्तरं विजहार च ॥९८॥
मेड़ता स्थित संघातिशय भक्तिवशाद्गुरुः ।
मासकल्पं विधायैकं विहारकृतवान्ततः ॥९९॥
परन्तु भूयते किंचिदपि न नृविचारितम् ।
नैवदुर्दैव कालेन त्यक्तःकोप्यत्र भूतले ॥१००॥
देहास्वस्थ तयापश्चा त्सगत्वा मेडतापुरम् ।
स्वायु निकटमालोक्य जग्राहानशनंगुरुः ॥१०१॥
पोषशुक्ल त्रयोदश्यां प्रान्तेमृत्वासमाधिना ।
प्रथम देवलोके सौ महर्द्धिकः सुरोभवत् ॥१०२॥
एको सौ प्रतिभाशाली महा प्रभाविकोभवत् ।
ततः समग्र संघोऽपि शोकेनाच्छादितोभृशम् ॥१०३॥
अनेन सूरिणाग्रन्था बहवो रचिताः पुनः ।
श्रीजैन चैत्यचैत्यानां प्रतिष्ठा विहितावरा ॥१०४॥
श्रीजिनसिंह सूरीन्द्र चरणद्वयपादुकाः ।
सप्रभावाःप्रविद्यन्ते वीकानेर पुरादिषु ॥१०५॥
श्रीजिनराजसूरीन्द्र जिनसागर सूरयः ।
तस्य पट्टधरा जाता इद्ध बुद्धि समन्विता ॥१०६॥

श्रीजिनराजसूरीणां च स्थानाङ्ग वृत्तिः नैषधकाव्यवृत्तिः धन्नाशालिभद्र रासः गजसुकमाल रासः चतुर्विंशति विंशति

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

जिन स्तवनानि इत्यादि कृतयः उपलभ्यन्ते।

सागरसूरि शिष्यो भू त्पद्मकीर्त्याख्य वाचकः।
पद्मरङ्गोऽस्य तत्पद्मचन्द्र रामेन्दु नामकौ ॥१०७॥

पद्मचन्द्र कृत जम्बू रासः रामचन्द्र कृत वैद्य विनोदः दशप्रत्याख्यान स्तवनं कृतयः उपलभ्यन्ते।

जिनसिंह गुरोर्हेम-मन्दिरहीरनन्दतौ।
शिष्यौ श्री लालचन्द्राख्यो भूद्धीरनन्दनस्य च ॥१०८॥

हेम मन्दिरस्य पुस्तक भंडारं जिनकुशलसूरि स्तवनम्, लालचन्द्रस्य मौनेकादशी स्तवनं, देवकुमार चतुष्पदी, हरिश्चन्द्र रासः, वैराग्य बावनी इत्यादिकृतयः उपलभ्यन्ते।

जिनचन्द्रगुरोः शिष्यः समयराज पाठकः।
अभयसुन्दरोऽस्यास्य कमल लाभ पाठकः ॥१०९॥
पाठको लब्धिकीर्त्याख्यो ऽस्य राजहंस पाठकः।
अस्य शिष्यो भवद्देव-विजयो स्यापिशास्त्रवित् ॥११०॥

समयराज पाठकस्य धर्ममञ्जरी चतुष्पदी, पर्यूषणव्याख्यान पद्धति, शत्रुञ्जय ऋषभस्तवनं अवचूरि संस्कृतमया ग्रन्था उपलभ्यन्ते।

जिनचन्द्र गुरोः शिष्यो धर्मनिधान पाठकः।
प्रागसौ दीक्षितोहस्ति कर रसेन्दु वत्सरान् ॥१११॥

अस्य च जीरावली पार्श्वनाथ स्तवनं, चतुर्विंशति जिन प्राकृत स्तवनानि आदि कृतयः उपलभ्यन्ते।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सुमतिसुन्दर धर्म-कीर्त्ति समयकीर्त्तयः ।
अस्य शिष्यास्त्रयो जाता सर्व शास्त्र विशारदाः ॥११२॥

सुमतिसुन्दरस्य शान्तिनाथ स्तवनम्, धर्मकीर्त्ते नेमिरासः मृगाङ्क पद्मावती चतुष्पदी, जिनसागरसूरि रासः चतुर्विंशति जिनचतुर्विंशति स्तवनानि साधु समाचारी बालावबोधः सत्तरीसय बालावबोधादि कृतयः उपलभ्यन्ते ।

विद्यासार दयासार-महिमसार साधवः ।
राजसारादयो धर्मकीर्त्तेः शिष्या प्रजज्ञिरे ॥११३॥

दयासारस्य इलापुत्र चतुष्पदी, अमरसेन वज्रसेन चतुष्पदी, राजसारस्य मकरध्वज रासः इत्यादि कृतयः उपलभ्यन्ते ।

शिष्यः समयकीर्त्तेश्च श्रीसोमाख्यो महामतिः ।
अस्य सुमति धर्माख्यो जातः शिष्य शिरोमणिः ॥११४॥

श्रीसोमेन स्वशिष्य सुमतिधर्मार्थं भुवनानंद चतुष्पदी कृता दृश्यते ।

जिनचन्द्र गुरोः शिष्यो रत्ननिधान पाठकः ।
साङ्ग श्री हेमशब्दानु शासन पठिता पुनः ॥११५॥
नन्दाब्धि रसचन्द्राब्दे श्रीचन्द्रसूरिणार्पितम् ।
उपाध्याय पदं यस्मै शिष्योस्यरत्नसुन्दरः ॥११६॥
जिनचन्द्र गुरोः शिष्यो रङ्गनिधान पाठकः ।
पुनः पाठक कल्याण तिलको भून्महाव्रती ॥११७॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

जिनचन्द्र गुरोः शिष्या हर्षवल्लभ वाचकाः ।
पुनः सुमति कल्लोल पुण्यप्रधान पाठकाः ॥११८॥

वाचक हर्षवल्लभस्य मयणरेहा चतुष्पदी, उपासग दसाङ्ग बालावबोधः सुमति कल्लोलस्य शुकराज चतुष्पदी, स्थानाङ्ग वृत्तिगत गाथा वृत्ति वादिहर्षनन्दनेन समं रचिता इत्यादि कृतयः उपलभ्यन्ते ।

जातः पुण्य प्रधानस्य शिष्य सुमति सागरः ।
तच्छिष्यौ ज्ञानचन्द्राख्य साधुरंगाख्य वाचकौ ॥११९॥

ज्ञानचन्द्रस्य ऋषिदत्ता चतुष्पदी, प्रदेश राज चतुष्पदी, साधुरंगस्य दयाषट्त्रिंशिकादि कृतयः उपलभ्यन्ते ।

ज्ञानचन्द्रस्य शिष्यो भू द्रंग प्रमोद वाचकः ।
श्री विनयप्रमोदाख्यः साधुरंगस्य वाचकः ॥१२०॥
रंगप्रमोदस्य चम्पक चतुष्पदी उपलभ्यन्ते ।
श्री विनयप्रमोदस्य विनयलाभ वाचकः ।
बालचन्द्रा पराख्यास्ति शिष्यो भूद्विशदाशयः ॥१२१॥

अस्य च वच्छराज देवराज चतुष्पदी सिंहासन द्वात्रिंशिका सवैया बावनीत्यादि कृतयः उपलभ्यन्ते ।

वाचक साधुरङ्गस्य राजसागर पाठकः ।
शिष्योस्याप्य भवद्विद्वान् श्री ज्ञानधर्म पाठकः ॥१२२॥
अस्य शिष्यो महाविद्वान् श्री दीपचन्द्र पाठकः ।
अध्यात्म तत्व वेत्तास्या भूद्देवचन्द्र पाठकः ॥१२३॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अस्य हितावहा भाषा प्राकृत संस्कृतात्मिकाः ।
कृतय उपलभ्यन्ते सुप्रसिद्धा अनेकशः ।।१२४।।

अस्य च आगमसारः नयचक्रसारः गुरुगुण षट्त्रिंशत् षट्त्रिंशिका बालावबोधः कर्मग्रन्थटबार्थः विचार रत्नसारः छुटक प्रश्नोत्तरः स्वयं लिखित पत्राणि, ध्यान दीपिका चतुष्पदी, द्रव्यप्रकाश भाषा, अध्यात्मगीता, अतीतवर्त्तमानानागत चतुर्विंशति, विंशति जिनानां स्तवनानि, बालावबोधः वीर-जिननिर्वाण, रत्नाकर पंचविंशति अनुवाद, सिद्धाचलादि तीर्थस्तवनानि, सहस्रकूट स्तवनम्, जिनस्तुति, अष्टप्रवचन स्वाध्याय, साधुपञ्च भावना, प्रभञ्जना स्वाध्याय, सम्यक्त्वादि स्वाध्यायः स्नात्रपूजा, नवपदपूजाउल्लाला, शान्तसुधारस भाषा इत्यादि बहुशः कृतयः उपलभ्यन्ते ।

मनरूप विजयेन्दु रायचन्द्रादयोऽस्य च ।
शिष्या विजयचन्द्रस्य रूपचन्द्रादयः पुनः ।।१२५।।
चन्द्रगुरोरुपाध्यायः सुमतिशेखराभिधः ।
शिष्योऽस्य ज्ञानहर्षाख्य चारित्र विजयाभिधाः ।।१२६।।
महिमाकुशलाख्य श्री रत्नविमल वाचकाः ।
महिमाविमलाद्यान्ते वासिनो दमिनां भवन् ।।१२७।।
जिनचन्द्रगुरोः शिष्यो दया शेखर वाचकः ।
पुन र्भुवनमेर्वाख्यो-भवच्छास्त्र विशारदः ।।१२८।।
शिष्योभुवनमेरोश्च श्रीपुण्यरत्न वाचकः ।
श्रीदयाकुशलोस्यास्यान्भवत् श्रीधर्ममन्दिरः ।।१२९।।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अस्य च मुनिपति चरित्रं दयादीपिका चतुश्पदी मोह-विवेकरासः परमात्मप्रकाशः नमस्काररासः चतुर्मासी व्याख्यानम्, संखेश्वर पार्श्वनाथस्तवनमित्यादि कृतयः उपलभ्यन्ते।

जिनचन्द्र गुरोः शिष्यो लालकलश वाचकः।
श्रीज्ञानसागरोस्यास्य कमलहर्ष वाचकः ॥१ ०॥
अन्येपि बहवो राजहर्ष निलय सुन्दराः।
हीरकलश कल्याणदेवहीरोदयो पुनः ॥१३१॥
वादि विजयराजाख्य श्री ज्ञानविमलादयः।
आसन् शिष्या महाप्राज्ञाः श्रीजिनचन्द्र सद्गुरोः ॥१३२॥
युग्मम॥

सूर्याज्ञावर्त्ति साधूनां मध्यात्केषांचिदुच्यते।
नामावलिः समासात्त त्कृत ग्रन्थानुसारतः ॥१३३॥
तत्राभवदुपाध्याय गीतार्थ पुण्यसागरः।
पितास्योदयसिंहाख्य उत्तमादेप्रसूः पुनः ॥१३४॥
श्रीजिनहंससूरीन्द्र कर कमल दीक्षितः।
गुरुदत्त महोपाध्याय पदधारकश्च सः ॥१३५॥
श्रीचन्द्रसूरि योगोप-धानतपोविधायकः।
सूरिणा सादरं स्निग्ध दृष्ट्या विलोकितश्च सः ॥१३६॥
समये समये तेन समं सूरीश्वरो भृशम्।
शास्त्रीय विषयानांहि परामर्श मचीकरत ॥१३ ॥
पुनरनेन संवत्ख-बाण रसेन्दुवत्सरे।
जेसलमेरु दुर्गेच श्राद्धजन समाकुले ॥१३८॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

जिनकुशल सूरीन्द्र-चरणपादुका द्वयं ।
प्रतिष्ठितं गतः स्वर्गं तत्रैव स च पाठकः ॥१३९॥ युग्मम्

अस्य च सुबाहुसन्धिः, मुनिमालिका, प्रश्नोत्तर काव्य वृत्तिः जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति वृत्तिः नमि राजर्षि गीतम्, पंचत्रिंशद्वाण्यतिशय गर्भितस्तवनम्, पंच कल्याणक पार्श्व जन्माभिषेक स्तवनम्, महावीर स्तवनम्, आदिनाथ स्तवनम्, अजितनाथ स्तवनम्, आदि कृतयः उपलभ्यन्ते । पुनः श्रीजिनचन्द्रसूरि कृत पौषध प्रकरण वृत्ति संशोधकः ।

पुण्यसागर शिष्याश्च श्रीपद्मराज वाचकाः ।
हर्षकुलाभिधोजीव-राजादयो भवन्वराः ॥१४०॥

श्री पद्मराज वाचकस्य भुवनहिताचार्य कृत रुचिरदण्डक वृत्तिः अभयकुमार चतुष्पदी, सनत्कुमार रासः क्षुल्लकार्षि-प्रबन्धः आदि कृतयः उपलभ्यन्ते । जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति वृत्ति रचनायां स्वगुरोः सहायदाता च ।

सूर्याज्ञावर्त्युपाध्याय-धनराजो भवत्पुनः ।
प्रज्ञाशाल्ययमप्युक्त-पौषधवृत्तिशोधकः ॥१४१॥

अनेन हेलया संवच्छैले लाङ्गेन्दु वत्सरे ।
निर्लोठितश्च शास्त्रार्थे वालेय धर्मसागरः ॥१४२॥

बीकानेर पुरे संवत्कराङ्गाङ्गेन्दु वत्सरे ।
अस्ति प्रतिष्ठितं तस्य चरण पादुकाद्वयम् ॥१४३॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रीजिनभद्रसूरीन्द्र-परम्परागतो भवत् ।
निष्कषायश्चगीतार्थो दयाकुशल वाचक ॥१४४॥
शिष्योस्यामरमाणिक्य-वाचकोस्याप्यभूत्पुनः ।
मूर्याज्ञावर्ति गीतार्थः श्रीसाधुकीर्त्ति पाठकः ॥१४५॥
ओस वशीय सुचेती-गोत्रीय वस्तुपालजीः ।
पिता खेमलदेव्यस्य प्रसूः शील गुणान्वितः ॥१४६॥
आगराख्य पुरे नेन बाणाक्ष्यङ्गेन्दु वत्सरे ।
साहिपर्षदि शास्त्रार्थे मूकी कृताश्च सागराः ॥१४७॥
कराग्नि रस भूवर्षे वैशाख पूर्णिमा तिथौ ।
अस्मै दत्तमुपाध्याय-पदं श्रीचन्द्रसूरिणा ॥१४८॥

समय समयेऽनेन समंसूरीश्वरः पुनः ।
शास्त्रीय विषयानांहि परामर्शं च कास्य ॥१४९॥

जालोर नगरे संव-द्रसान्ध्यङ्गेन्दु वत्सरे ।
माघ कृष्ण चतुर्दश्यां पाठकोऽयं दिवंगतः ॥१५०॥

अस्य च सप्तस्मरण बालावबोधः, सप्तदशभेदपूजा, आषाढभूतिप्रबन्धः मौनेकादशी स्तवनम्, भक्तामरावचूरिः, नमि राजर्षि चतुष्पदी, अमरसर शीतल जिन स्तवनम्, शेष नाममाला, दोषापहार स्तोत्र बालावबोधः इत्यादि कृतयः उपलभ्यन्ते ।

अस्या सन्वाचकाः शिष्या विमल तिलकाभिधाः ।
श्रीसाधु सुन्दराख्य श्रीमहिम सुन्दरादयः ॥१५१॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

विमल तिलकस्या भू द्विमल कीर्ति वाचकः ।
सम्वत्कराङ्क देहेन्दु-वर्षे स्वर्गगतश्च सः ॥१५२॥

अस्य च चन्द्रदूत महाकाव्यं पदव्यवस्था, दण्डक बालावबोधः नवतत्व बालावबोधः जीवविचार बालावबोधः जयतिहुयण बालावबोधः प्रतिक्रमण विधि स्तवनादीनि उपलभ्यन्ते ।

साधुसुन्दरस्य उक्ति रत्नाकरः धातुरत्नाकरः शब्दप्रभेदनाम माला, पार्श्वनाथ स्तवनादीनि उपलभ्यन्ते ।

साधुसुन्दर शिष्यो भू दुदय कीर्त्ति वाचकः ।
येन पद व्यवस्थाया वृत्तिका रचिता वरा ॥१५३॥

महिम सुन्दरस्य शत्रुञ्जय तीर्थोद्धार कल्पः श्री नेमि विवाहलादि कृतयः उपलभ्यन्ते ।

नयमेर्वभिधज्ञान-मेर्वाख्य वाचकादयः ।
शिष्या अस्यास्यकेशव-दास श्रीनयमेरुकाः ॥१५४॥

ज्ञान मेरोः गुणावलिचतुष्पदी, विजयश्रेष्ठि विजयाश्रेष्ठिनी प्रबन्धः केशवदासस्य वीरभाणोदयभाण रास, बावनी इत्यादि कृतयः उपलभ्यन्ते ।

शिष्यो विमलकीर्त्तिश्च विमलचंद्र वाचकः ।
अस्य विजयहर्षाख्य धर्मसी धर्मवर्द्धनाः ॥१५५॥
साधुकीर्त्ति गुरु भ्राता सूर्याज्ञावर्त्तको भवत् ।
गीतार्थो नाहटागोत्री कनकसोम पाठकः ॥१५६॥

अस्य च जइत पदवेलि, जिनपाल जिनरक्षित रासः आषाढ

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

भूति प्रबन्धः हरिकेशि सन्धिः, आर्द्र कुमार चतुष्पदी, मङ्गल-कलश रासः श्रीजिनवल्लभसूरि कृत पंच स्तवनावचूरिः स्थावचा-सुकोशल चरितम्, कालिकाचार्यकथा इत्यादि कृतयः उपलभ्यन्ते।

रङ्गकुशल लक्ष्म्यादि-प्रभ श्रीकनकप्रभाः।
श्री यशः कुशलाद्याश्चा-स्या सन् शिष्याविशारदाः ॥१५६॥

रङ्गकुशलकृताऽमरसेन वज्रसेन सन्धिः, लक्ष्मीप्रभकृताऽमर-दत्त मित्रानन्द रासः, कनकप्रभ कृत दशविधि यतिधर्म गीतादि कृतयः उपलभ्यन्ते।

श्रीजिनभद्रसूरीन्द्र-विद्वत्परम्परागतः।
स्वपर कृतभद्र श्री-समयध्वज वाचकः ॥१५७॥
श्रीज्ञान मन्दिरोस्यास्य-समयध्वज वाचकः।
शिष्योस्य नयरंगाख्य समयरङ्ग वाचकौ ॥१५८॥

समयरङ्गस्य गौड़ी स्तवनम्, नयरङ्गस्य सप्तदशभेदपूजा, विधिकन्दलीप्राकृतस्वोपज्ञ वृत्तिः परमहंस सम्बोध चरित्रं केशि प्रदेशि सन्धिः गौतमपृच्छामूल, जिनप्रतिमा षट्त्रिंशिका, कल्याणक स्तवनादि कृतयः उपलभ्यन्ते।

विमल विजयोस्या भू च्छिष्योस्य धर्ममन्दिरः।
राजसिंहादयः शिष्या बभूवुर्मु ति सत्तमाः ॥१५९॥

राजसिंहस्याराम शोभा चतुष्पदी पार्श्व विमलनाथादि स्तवनानि, जिनराजसूरि गीतादि कृतयः उपलभ्यन्ते।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

धर्ममन्दिर शिष्यो भू त्पुण्यकलश पाठकः।
शिष्योस्य जयरङ्गोस्य तिलकचन्द्र वाचकः ॥१६०॥

पुण्यकलश कृत स्तवनादीनि जयरंगस्यामरसेन वज्रसेन चतुष्पदी दशवैकालिक स्वाध्यायादीनि. तिलकचंद्रस्य प्रदेशी प्रबन्धादीनि उपलभ्यन्ते।

शिष्याश्चाभय धर्मस्य कुशललाभ वाचकः।
सूर्याज्ञावर्त्तकः शिष्य-प्रशिष्यादि विराजितः ॥१६१॥

अस्य च माधवानल चतुष्पदी, ढोलामारु चतुष्पदी, तेजसार रास अगड़दत्त रासः पूज्य वाहण गीतम्, पार्श्वनाथ स्तवन छंदः आदि कृतयः उपलभ्यन्ते।

वाचकमतिभद्रस्य चारित्रसिंह वाचकः।
शिष्यो भवन्महाप्राज्ञः सूरीन्द्र शिष्टिपालकः ॥१६२॥

अस्य च चतुःशरण प्रकीर्णक सन्धिः सम्यक्त्वविचार स्तव बालावबोधः, कातन्त्र विभ्रमावचूर्णिः मुनिमालिका, रूपकमाला वृत्तिः शास्वत चैत्यस्तवः खरतर पट्टावली, अल्पाबहुत्त्व स्तवनं इत्यादि कृतयः उपलभ्यन्ते।

क्षेमधाड़ाख्य शाखायां श्रीजयसोम पाठकः।
शिष्या प्रमोद माणिक्य-पाठकस्याभवद्वरः ॥१६३॥
जिनमाणिक्यसूरीन्द्र-दत्तदीक्षामहामतिः।
योऽसाधारण मेधावी प्रकाण्ड पण्डितो भवत् ॥१६४॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

बाण खांगेन्दु वर्षीय प्रशस्तयां लिखितास्ति च ।
अस्य जेसिंघ इत्यान्या ख्यासत्प्रभावशालिनः ॥१६५॥
रस युगांग चन्द्राब्दा त्प्राग् कर्मचन्द्र मन्त्रिणे ।
पूर्णान्येकादशांगानि येन संश्रावितानि च ॥१६६॥
लाभपुरेङ्क वेदाजे-लावर्षे फाल्गुनाऽर्जुने ।
द्वितीयाया मुपाध्याय-पदं संजातमस्य च ॥१६७॥
साहिपर्षदिशास्त्रार्थे हेलया नेन धीमता ।
एको निरुत्तरी चक्रे पण्डितः पण्डिताग्रणीः ॥१६८॥
बाणाश्वरस चन्द्राब्दे वैशाखर्जुनपक्षके ।
त्रयोदश्यां प्रतिष्ठा भू-द्यदा शत्रुञ्जयो परि ॥१६९॥
श्रीजिनराजसूरीन्द्रैः समन्तदा भवानभूत् ।
शोधिता लिखितानेन पौषध विधि वृत्तिका ॥१७०॥
समग्र सैद्धान्तिक चक्रचक्र-वर्त्ती स्व सिद्धान्त रहस्य वेत्ता ।
प्रदत्त सैद्धान्तिक सत्क सर्व-प्रश्नोत्तरो भून्मुनि पाठकोऽयं
॥१७१॥

अस्य च ईर्या पथिका षटत्रिंशिका, स्वोपज्ञ वृत्तिः पौषध षट्त्रिंशिका स्वोपज्ञ वृत्तिः, पर्यूषणा षट् त्रिंशिका स्वोपज्ञ वृत्तिः स्थापना षट्त्रिंशिका स्वोपज्ञ वृत्तिः कोडा श्राविका व्रतग्रहण रासः रेखा श्राविका व्रतग्रहण रासः अष्टोत्तरी स्नात्र विधिः षड्विंशति प्रश्नोत्तर ग्रन्थः एक शतैक चत्वारिंश त्प्रश्नोत्तरः (विचार रत्न संग्रहः) आदि जिनस्तवनम्, चतुर्विंशति

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

जिन गणधर स्तवनम्, कर्मचंद्र मंत्रिवंश प्रबन्धः वज्रस्वामि चतुष्पदी, द्वादश भावना सन्धिः इत्याद्योनेके ग्रन्था उपलभ्यन्ते।

गुणरंग दयारंग-पद्ममन्दिर वाचकाः।
शिष्याः प्रमोदमाणिक्य पाठकस्यापरे भवन् ॥१७२॥

वाचक गुणरंगस्य शत्रुञ्जय यात्रा परिपाटी, सामायिक वृद्ध स्तवन, अजितनाथ समवशरण स्तवनं, अष्टोत्तर शत-नमस्कार मणिका स्तवनम्, इत्यादि कृतयः उपलभ्यन्ते।

अस्य ज्ञान विलासोस्य, लावण्यकीर्त्ति वाचकः।
अन्यो भुवनकीर्त्याख्य शिष्यो भवन्महाकविः ॥१७३॥

लावण्यकीर्त्तेः रामकृष्ण चतुष्पदी, गजसुकमाल रासः इत्यादि कृतयः उपलभ्यन्ते।

शिष्य श्रीजयसोमस्य गुणविनय पाठकः।
वाचक सुयशः कीर्ति विजय तिलकोभवत् ॥१७४॥
लाभपुरेङ्क वेदांगे-लावर्षे फाल्गुनार्जुने।
द्वितीयायामभूद्गुण-विनय वाचकास्पदम् ॥१७५॥
बाणाश्वरस चन्द्राब्दे यदा शत्रुञ्जयोपरि।
प्रतिष्ठा भूत्तदाविध-मानोभवद्भवानपि ॥१७६॥

अस्य च खण्ड प्रशस्ति काव्य वृत्तिः, नेमिदूत काव्य वृत्तिः, नलदमयन्तीचम्बू वृत्तिः, रघुवंश वृत्तिः प्राकृत वैराग्य शतक वृत्तिः, सम्बोधसप्तति वृत्तिः कयवन्ना सन्धिः कर्मचन्द्र

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

मन्त्रि रासः, कर्मचन्द्र मन्त्रिवंशप्रबन्ध वृत्तिः पार्श्वनाथ स्तवनम् लघुशांति वृत्तिः अञ्जनासुन्दरी प्रबन्धः, चतुर्मङ्गलगीतं, शत्रुञ्जय यात्रा स्तवनम्, ऋषिदत्त चतुष्पदी, इन्द्रिय पराजय शतकवृत्तिः गुणसुन्दरी चतुष्पदी, नलदमयन्ती प्रबन्धः कुमति मत खंडन वृत्तिः जम्बूरासः, जेसलमेरु पार्श्वनाथ संस्कृत स्तवनम्, धन्ना शालिभद्र चतुष्पदी, अंचलिकमत स्वरूप वर्णनम्, जिनराज-सूर्यष्टकम् पार्श्वजिन स्तवनम्, तपामतीयैकपंचाशद्वचन चतुष्पदी तस्या वृत्तिः इत्यादि कृतय उपलभ्यन्ते ।

सुयशःकीर्त्तेः शंखेश्वर पार्श्वनाथ स्तवनमुपलभ्यते ।

श्री तिलकप्रमोदाख्यो विजयतिलकस्य च ।
शिष्यो भाग्यविशालोस्या-भवद्विशाल बुद्धिमान् ॥१७७॥
गुणविनय शिष्योऽभूत् श्रीमतिकीर्त्तिरस्य च ।
शिष्यौ सुमतिसिन्धूर सुमतिसागराभिधौ ॥१७८॥

मतिकीर्त्तेः नियुक्ति स्थापनम्, लखमसी कृतैकविंशति प्रश्नोत्तरः गुणकित्त्व षोडशिका, ललिताङ्ग रासः लुंपकमतोत्थापक गीतम् इत्यादि कृतय उपलभ्यन्ते ।

सुमतिसिन्धुर रचित पार्श्वनाथ स्तवनमुपलभ्यते । सुमतिसिन्धुरस्य कीर्त्तिविशालादयोऽनेके शिष्याः तेषां कृतय उपलभ्यन्ते ।

सुमतिसागरस्य शिष्य कनककुमारः तस्य शिष्य कनकविशाल कृत देवराज वच्छराज चतुष्पदी उपलभ्यते ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सुप्रसिद्धो महाप्राज्ञो जयसागर पाठकः ।
तस्य परम्परायातोभूद्भानुमेरु पाठकः ॥१७९॥
तस्य शिष्यो भवद्विज्ञो ज्ञानविमल पाठकः ।
सज्जनवल्लभस्तस्य श्री श्रीवल्लभ पाठकः ॥१८०॥

उपाध्याय ज्ञानविमल कृत शब्दप्रभेदवृत्तिरुपलभ्यते। श्रीवल्लभस्य शीलोञ्छ कोषवृत्तिः लिङ्गानुशासन दुर्गपदप्रबोध वृत्तिः अभिधान नाममालावृत्तिः विजयदेव माहात्म्यम्, उपकेश शब्द व्युत्पत्तिः अरनाथस्तुति स्वोपज्ञ वृत्तिः इत्यादि कृतय उपलभ्यन्ते ।

जिनकुशलसूरीन्द्र-संततौ पाठको भवत् ।
हर्षचन्द्रोस्य शिष्यः श्रीहंसप्रमोद पाठकः ॥१८१॥
अस्य च सारङ्गसार वृत्तिः स्तवनादीनि उपलभ्यन्ते ।

तच्छिष्यौ चारुदत्ताख्यपुण्यकीर्त्याख्य वाचकौ ।
श्रीकनकनिधानाख्यो भूच्चारुदत्त शिष्यकः ॥१८२॥

चारुदत्तस्य जिनकुशलसूरि स्तवनम्, मुनिसुव्रतस्वामि स्तवनम् कनकनिधानस्य रत्नचूड रासः, पुण्यकीर्त्तेः रूपसेन राज चतुष्पदी, मत्स्योदर चतुष्पदी, पुण्यसार रासः धन्ना चरित्रम् कुमारमुनि रासः आदि कृतय उपलभ्यन्ते ।

श्रीजिनभद्रसूरीन्द्रशिष्य परम्परागतः ।
वीरकलश शिष्योभूत्सूरचन्द्राख्य वाचकः ॥१८३॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अस्य च पञ्चतीर्थि श्लेषालङ्कार चित्रः चतुर्मासिक व्याख्यानम्, वर्ष फलाफल ज्योतिः स्वाध्यायः इत्यादि कृतय उपलभ्यन्ते ।

श्रीजिनदत्तसूरीन्द्र-शिष्य परम्परागतः ।
श्रीहर्षसार शिष्यो भून्छिवनिधान पाठकः ॥१८४॥

अस्य च कल्पसूत्र बालावबोधः चतुर्मासिक व्याख्यानम्, लघुविधिप्रपा, कृष्ण रुक्मिणी वेलिका, इत्यादि कृतय उपलभ्यन्ते ।

अस्य महिमसिंहाख्य-मतिसिंहाख्य वाचकौ ।
अस्या भवन्वराः शिष्याः श्रीसिंहविनयादयः ॥१८५॥

महिमसिंहस्य (अपर नाम मानकवेः) कीर्त्तिधर सुकौशल प्रबन्धः मेतार्यर्षि चतुष्पदी क्षुल्लककुमार चतुष्पदी, हंसराज-वच्छराज प्रबन्धः अर्हद्दासप्रबन्धः मेघदूत वृत्तिः आदि कृतय उपलभ्यन्ते । सिंहविनयस्य उत्तराध्ययन गीतानि उपलभ्यन्ते ।

कनकमतिसिंहस्य श्रीरत्नजय वाचकः ।
रत्नजयस्य शिष्यो भूदयातिलक वाचकः ॥१८६॥

रत्नजय कृतादिनाथ पञ्चकल्याणकस्तवनम् दयातिलकस्य धना रासः भवदत्त चतुष्पदी आदि कृतय उपलभ्यन्ते ।

श्रीक्षेमकीर्त्तिशाखायां हेमनन्दन वाचकः ।
तस्य शिष्यो भवद्विद्वान् सहजकीर्त्ति वाचकः ॥१८७॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

हेमनन्दन कृत सुभद्रा चतुष्पदी, सहजकीर्त्तेः शतदलपद्म-यन्त्रमय श्रीपार्श्वजिन स्तवनम्, देवराज चतुष्पदी, वच्छराज चतुष्पदी, शत्रुञ्जयमहात्म्य रासः सागरश्रेष्ठि चतुष्पदी, हरिश्चन्द्र रासः सारस्वत वृत्तिः कल्पसूत्र वृत्तिः (कल्पमञ्जरी) महावीर स्तुति वृत्तिः सप्तद्वीपि शब्दार्णव व्याकरण ऋजुप्राज्ञ व्याकरण प्रक्रिया अनेकशास्त्रसार समुच्चयः एकादि शतपर्यन्त शब्दसाधनिका नामकोषः प्रतिक्रमण बालावबोधः गौतम-कुलकवृहद्वृतिः प्रीति षटत्रिंशिका, उपधान विधि स्तवनम्, जेसलमेरु चत्यपरिपाटी स्तवनम् इत्यादि कृतय उपलभ्यन्ते ।

हेमनन्दन बन्धुश्च श्रीरत्नहर्षवाचकः ।
शिष्यौतस्य पुनर्हेमकीर्त्ति श्रीसारवाचकौ ॥१८८॥

श्रीसारस्य पार्श्वनाथ रासः जिनराजसूरिरासः जयविजय चतुष्पदी कृष्णरुक्मिणी वेलि बालावबोधः सप्तदश भेदपूजा गर्भित शांतिनाथ स्तवनम्, लोकनालिगर्भित चन्द्रप्रभस्तवनम्, गुणस्थान क्रमारोह बालावबोधः इत्यादि कृतय उपलभ्यन्ते ।

पूज्यैः समं क्रियोद्धार-कारकः शुभवर्द्धनः ।
वाचकस्तस्य शिष्योभूत्सुधर्मरुचि वाचकः ॥१८९॥

अस्य चाषाढभूति रासः गजसुकुमाल रासः आदि कृतय उपलभ्यन्ते ।

सूरि सागरचन्द्रस्य परम्परागतो भवत् ।
सूर्याज्ञावर्त्तको विद्वान् ज्ञानप्रमोद वाचकः ॥१९०॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

एतद्रचित वाग्भट्टालङ्कार वृत्तिरुपलभ्यते।
शिष्यो विशालकीर्त्याख्यो स्याभूद्विरुदधारकः।
सरस्वत्या जयंप्राप्त ईडर राजसंसदि ॥१६१॥
अस्य प्रक्रियाकौमुदी आदि कृतय उपलभ्यन्ते।
शिष्योस्य हेमहर्षोस्य रामचन्द्रामरौमुनी।
आद्यस्याभयमाणिक्यो स्यलक्ष्मीविनयो भवत् ॥१६२॥

अस्याभयकुमार रासः ढुंढकमतोत्पत्ति रासादि कृतय उपलभ्यन्ते।

सूर्याज्ञावर्त्तको विद्वान् हीरकलश वाचकः।
शिष्योस्याभून्महाप्राज्ञः श्रीहेमनन्दन वाचकः ॥१६३॥

हीरकलशस्य सम्यक्त्व कौमदीरासः कुमति विध्वंसन चतुष्पदी, जोइसहीर इत्यादि हेमनन्दनस्य वैताल पञ्चविंशतिः भोजचरित्र चतुष्पदी इत्यादि कृतय उपलभ्यन्ते।

वाचक राजचन्द्रस्य, जयनिधान वाचकः।
शिष्यो भवन्महाप्राज्ञः सर्वशास्त्र विशारदः ॥१६४॥

अस्य धर्मदत्त धनपति रासः सुरप्रियरासः इत्यादि कृतय नपलभ्यन्ते।

श्रीकीर्त्तिरत्नसूरीन्द्रपरम्परागतो भवत्।
शिष्यो विमलरङ्गस्य लब्धिकल्लोल वाचकः ॥१६५॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अस्य श्रीअकबर प्रतिबोधक श्रीजिनचन्द्रसूरि रास गहुलिकादि कृतय उपलभ्यन्ते।

अस्य ललितकीर्त्याख्य-गङ्गादासाख्य वाचकौ।
शिष्यौ ललितकीर्त्तेश्च, राजहर्षाख्य वाचकः ॥१९६॥

ललितकीर्त्तेः अगडदत्त रासः गंगादासस्य वंकचूलरासः राजहर्षस्य थावच्चारासः सुकोशलरासः आदि कृतय उपलभ्यन्ते।

वाचक हर्षकल्लोलो भवद्गुण महोदधिः।
शिष्योऽस्यप्रतिभाशाली श्रीचन्द्रकीर्त्ति वाचकः ॥१९७॥

अस्य च यामिनीभानु मृगावती चतुष्पदी रुपलभ्यते।

पूज्यैः पूर्वं क्रियोद्धार कृद्भावहर्ष पाठकः।
सूर्याज्ञायां स्थितोयावद्रसाक्ष्यङ्गेन्दु वत्सरम् ॥१९८॥
पृथग्भूतस्ततश्चास्माद्भावहर्षाख्य पाठकात्।
भावहर्षीय शाखाभूत्खरतर गणस्य च ॥१९९॥
आसन् विजयमेर्वाद्याः सूरीन्द्र शिष्टिकारकाः।
साधवोबहवोऽन्येपि, क्रियावन्तो विशारदाः ॥२००॥

विजयमेरु रचित हंसराज बच्छराज प्रबन्ध उपलभ्यते।

राजेश साह्यकबर प्रतिबोधकस्य,
श्रीजैन शासनसमुन्नति कारकस्य
श्रीमज्जगद्गुरु सवाइ युगप्रधान-
भट्टारकस्य चरिते जिनचन्द्रसूरेः ॥२०१॥

इति श्री सवाई युगप्रधान भट्टारक श्रीजिनचन्द्रसूरि चरिते
शिष्य प्रशिष्याद्याज्ञाकारकवाचंयम वर्णात्मकः
पञ्चमः सर्गः समाप्तः ॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ षष्ठः सर्गः

सम्राजोऽकबरस्यासन् शासन समये जनाः ।
कोटिशा भक्तिमन्तश्च जैनधर्मावलम्बिनः ॥१॥
जनानां हृदयंस्यूतप्रोतंतस्मिन् क्षणे भवत् ।
प्रकृष्ट धार्मिक श्रद्धाभक्तिभाव क्रिया गुणैः ॥२॥
श्राद्ध चेतसि वात्सल्यं स्वधर्मि बान्धवान्प्रति ।
तदानी मुच्छलत्पूज्यभावंच सद्गुरून्प्रति ॥३॥
तस्मिन्क्षणे महाशूरा महावैभवशालिनः ।
स्थाने स्थाने प्रतिष्ठाप्ता मन्त्र्याद्य च्चैः पदस्थिताः ॥४॥
राजमान्याः सुधर्मिष्टा महादानेश्वरा वराः ।
अनेके श्रावका आसन् पराधृष्या धनीश्वराः ॥५॥ युग्मम्॥
श्रीजिनचन्द्रसूरीन्द्रानुयायि भक्तिशालिनः ।
लक्षशः श्रावका मन्त्रि कर्मचन्द्रादयो भवन् ॥६॥

उक्तंचः—

येषां हस्त प्रभावातिशय मभिदधुर्मन्त्रिकर्मादिचन्द्राः
श्रीमत्साहीश साहेरकबर नृपतेप्राप्त सभ्य प्रतिष्ठाः
स्थाने स्थाने प्रकृष्टा नरपति विदिताः श्रावका ऋद्धिमन्तः
संघात्पक्षा विपक्ष प्रतिभय जनका लक्ष संख्या विशेषात् ॥१॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य शिष्टि कृत्साधु संघेन संविहृत्य च ।
सर्वत्र जैनधर्मस्य प्रचारो विदधे महान् ॥७॥
अतः सूरीश्वरश्राद्धगणो धर्म स्थिराशयः ।
विज्ञो देवादि तत्वान्य-मंस्ताराध्यतयागुणी ॥८॥
यतो धार्मिक संघर्षे म्लेच्छराज भयङ्करे ।
श्राद्धा धर्मे स्थिरा आसन् गाढदृढत्त्व पूर्वकम् ॥९॥
केवलं न कृता धर्मरक्षा कित्वात्मनोयकैः ।
अपूर्व त्याग दानेन धर्मसेवातुलानघा ॥१०॥
तीर्थानां रक्षणं यत्र जीर्णोद्धार विधापनम् ।
नूतन रमणीयाप्तचैत्य चैत्य विधापनम् । ॥११॥
तत्प्रतिष्ठापनं स्वीय धर्मबान्धव पोषणम् ।
संघ निष्काशनादीनि मुख्य कृत्यानि सन्ति च ॥१२॥युग्मम्॥
धार्मिक सेवया सार्द्धं ते पश्चात्पतिता नहि ।
देशसेवोपकराद्यावश्यक शुभ कर्मसु ॥१३॥
ते दुष्कालेषु कष्टोपार्जित द्रव्य व्यये भवन् ।
संक्षिप्त वृत्तयो नैव किन्तु विशाल मानसाः ॥१४॥
यवनराज्यकालीन दुष्काल समये पुनः ।
महाभयंकरे जीवधान्य तृणादि दुर्लभे ॥१५॥
मण्डित्वा जैनिभिर्दानशालादुस्थादि हेतवे ।
प्रभूतं गौरवं प्राप्तं यथा तथा परैर्नहि ॥१६॥ युग्मम्॥
सूरि भक्तर्द्धिमद्धर्मनिष्ट सुश्राद्ध मध्यतः ।
मन्त्रि कर्मचन्द्रादि सम्बन्धः किंचिदुच्यते ॥१७॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

ओसवंशीय जातीयपूतेतिहासकेस्ति च ।
वच्छावताख्य गोत्रस्य गरिमा गौरवान्विता ॥१८॥
तच्छ्वेत कीर्त्ति कौमुद्या विस्तृत वर वर्णनम् ।
श्रीकर्मचन्द्र मन्त्रीशवंश प्रबन्धतोस्ति च ॥१९॥
अस्य वंशस्य सन्नृणां राज्य वृद्धयादि कारिणाम् ।
वर्ष सार्द्ध शतंयावदारभ्य राज्य स्थापनात् ॥२०॥
श्रीवीकानेर राज्येन सार्द्धं परस्परं महान् ।
गाढतरः सुसम्बन्धः संस्थितः क्षीरनीरवत् ॥२१॥ युग्मम्॥
राजनैतिक क्षेत्रेण समं तद्वंशजै र्नरैः ।
सेवा धार्मिकक्षेत्रेषूल्लेखनीया कृतास्ति च ॥२२॥
वंशस्य जैनधर्मानुरागित्व करणेस्य च ।
खरतर गणाधीशाचार्य श्रेयोऽस्ति निर्मलम् ॥२३॥
तैरपीदं गणं प्रत्यकारि धर्मानुरागिभिः ।
अति कृतज्ञता रूपश्रद्धांजलि समर्पणम् ॥२४॥
तद्विशेष परिज्ञातु भिच्छुभिरितिहासिभिः ।
कार्यः परिचयः कर्मचन्द्र वंश प्रबन्धतः ॥२५॥
सूरि जीवन सम्बन्ध रक्षकयोः प्रदीयते ।
परिचयश्च संग्रामसिंह श्री कर्मचन्द्रयोः ॥२६॥
संग्रामसिंह मंत्रीशः श्रीनगराज मन्त्रितुक् ।
अभूद्भक्तोनुरागी च खरतर गणं प्रति ॥२७॥
अयं प्रेरक मुख्योभूत्सुव्यवस्था विधापने ।
तत्कालीन स्वगच्छस्य दूरीकृत्य शिथीलताम् ॥२८॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सूरीन्द्रेण क्रियोद्धारं वन्हीलाङ्गेन्दु वत्सरे ।
यदा कृतंतदाऽनेन बहुद्रव्यं व्ययी कृतम् ॥२९॥
वीकानेर पुरेनेन पुण्यार्थं स्वप्रसोर्वरा ।
बृहत्पौषधशालाच निर्मापिता सुमन्त्रिणा ॥३०॥
पुनः प्रतिगृहं तत्र चतुर्विंशति वारकान् ।
एकैक रौप्यमुद्राणां तेन लम्भनिकाः कृताः ॥३१॥
वीकानेर पुराधीशकल्याणसिंहभूपतेः ।
मंत्रीस चाभवद्वीव्यचतुर्बुद्धि समन्वितः ॥३२॥
श्रीहसनकुलीखानसन्धिकर्त्ता सधी सखः ।
घनं धनं व्ययीचक्रे धार्मिक क्षेत्र सप्तसु ॥३३॥
चंद्र चंद्राङ्ग चन्द्राब्दे पाठक साधुकीर्त्तिना ।
सप्तस्मरण बालावबोधोऽस्याग्रहात्पुनः ॥३४॥
यात्रां विधाय सिद्धाद्रेः प्रत्यागच्छन्सधी सखः ।
मेवाडेश महाराणोदयसिंहेन सत्कृतः ॥३५॥
सुरूपा सुरताणाख्य भगवता प्रिया त्रयम् ।
अस्यताश्चा भवन्दक्षा धर्मकृत्य परायणाः ॥३६॥
श्रीकर्मचन्द्र मन्त्रीश-जसवन्ताभिधौ सुतौ ।
अभूतां तस्य धीशालिशुभलक्षण लक्षितौ ॥३७॥
संग्रामसिंह मन्त्रीशमृत्योरनन्तरं कृतः ।
राय कल्याणसिंहेन कर्मचन्द्रः स्वधीसखः ॥३८॥
अमात्य कर्मचन्द्रेण परिवारैर्निजैः समम् ।
शत्रुञ्जयाऽर्बुद स्तम्भादितीर्थ दर्शनं कृतम् ॥३९॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

कुशलोऽयं रणेराजनीतौसन्धि विधापने ।
धर्मी दानीच वीरो भूपरदुःखौघ भञ्जकः ॥४०॥
स्थित्वा योधपुरे राजप्रासादस्य गवाक्षके ।
अस्माभिरेकधा कार्या कमलपूजनेति च ॥४१॥
राव कल्याणसिंहेनास्मत्पूर्वज मनोरथः ।
चिरकालीन दुःसाध्यः कथितो मन्त्रिणंप्रति ॥४२॥ युग्मम्॥
रायसिंह कुमारेण सार्द्धं मन्त्रीश्वरस्ततः ।
गत्वागरापुरं धीमान् मिलितोऽकबरं प्रति ॥४३॥
साहिनं तत्रमन्त्रीशः प्रसन्नी कृत्य हेलया ।
साधयामास तत्कार्यं विषमं कठिनं पुनः ॥४४॥
रावकल्याणसिंहोथ प्रसन्नो मन्त्रिणं प्रति ।
वरं ददौ तदानेनेदंमागितं वर त्रयम् ॥४५॥
कुर्युः सावद्यकर्माणि चतुर्मास्यां न सर्वथा ।
तिलादि पीडनादीनि कुम्भकृत्तैलिकादयः ॥४६॥
चतुर्थांशसमादान मालाख्य शुल्क मोचनम् ।
सदायत्यामुरभ्राजागवादिकर मोचनम् ॥४७॥
एतत्स्वीकृत्य भूपेनात्यन्तानुग्रह सूचकम् ।
ग्राम चतुष्टयं दत्त यावच्चन्द्र दिवाकरम् ॥४८॥
दिल्ल्या आक्रमणं कर्तुं महासैन्य समन्वितः ।
श्रीइब्राहिम मीर्जाख्य आयाति यवनाधिपः ॥४९॥
श्रुत्वा नागपुराभ्यर्णं संगत्वाऽभिमुखंच सः ।
ससैन्य रायसिंहश्च रणे जिगाय धीसखः ॥५०॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

मन्त्री सम्राज्य सहाय्यार्थं चटित्वा देशगूर्जरे ।
युद्धं चक्रे रणे मीर्जामहमद हुसेनतः ॥५१॥
स तत्र विजयं प्राप्य चतुर्बुद्धि निधिः पुनः ।
श्री सोजत समीयाणार्बूदेशवशमानयत् ॥५२॥
स्ववशीकृत्य मन्त्रीशो जालोर नगरेश्वरम् ।
नामयामास भूमीशरायसिंहस्य पादयोः ॥५३॥
मन्त्रिणावाप्य साह्याज्ञां तत्सैन्याक्रमितस्य च ।
अर्बूदाचल तीर्थस्य रक्षाकृताघहारिणः ॥५४॥
तेन तत्रत्य चैत्येषु सुव्यवस्था कृता पुनः ।
स्वर्णदण्डं ध्वजं कुम्भं संस्थापितं सुभावतः ॥५५॥
शिवपुरी समायाता बन्दीजनाः स्वसद्मनि ।
लात्वा सन्मानिताः कर्मचन्द्रेण भोजनादिभिः ॥५६॥
भूमीश रायसिंहानुग्रहादनेन मन्त्रिणा ।
सैनिकेभ्यः समीयाणाबन्दीजनाविमोचिताः ॥५७॥
सम्वद्बाण गुणाङ्केन्दुवर्षेप्रपतितो महान् ।
दुष्कालोयत्र लोकाश्चाभवन् प्रभूतदुःखिताः ॥५८॥
तदानीं मन्त्रिणातेन यावन्मास त्रयोदश ।
दानशालां समुद्घाटयाहाराद्यर्थ्यशनादिकम् ॥५९॥
तृणार्थिभ्यस्तृणं वस्त्रं वस्त्रार्थिभ्यः सदौषधम् ।
रोगिभ्य आश्रयार्थिभ्य आश्रयं च समर्पितम् ॥६०॥ युग्मम्॥
यत्किंचित्कोऽपि योयाचीत्तत्सर्वं धीसखोददौ ।
स्वसाधर्मिक बन्धुभ्यः कथनीयं किमस्यतु ॥६१॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

समुत्तीर्णे च दुष्काले स्वस्थानं प्रापिता जनाः ।
तदानीं मन्त्रिणोदार भावात्स्व स्वंऽयशी कृतम् ॥६२॥
दुस्थ साधर्मिकान् गुप्तवृत्त्याचापोषयत्सदा ।
स्वबन्धूनिव मन्त्रीशोः धान्यवस्त्र धनादिभिः ॥६३॥
गुणगुण रसेलाब्दे शिवपुरीं विलुंख्य च ।
तुरसमाख्य खानेनादायि घनंधनादिकम् ॥६४॥
हेमबुद्धया च तत्रत्या गृहीतातेन निर्मलाः ।
एकसहस्र पञ्चाशद्धात्वीय जिनमूर्त्तयः ॥६५॥
सच फतेपुरेसाह्यकबरं प्रत्यढोकयत् ।
निषिध्य गालनं तासां सुस्थाने स्थापयत्सताः ॥६६॥
पञ्चषट्वाब्दकं यावत्तासा मानयनाय च ।
कृतः परिश्रमः श्राद्धैः परन्तु मिलिता न ताः ॥६७॥
ततो बुद्धि निधिर्मन्त्री प्रभूत द्रव्य ढौकनात् ।
प्रसन्नी कृत्य सम्राजं तच्छिष्टया प्रतिमाश्च ताः ॥६८॥
नन्दगुणाङ्क चन्द्राब्दाषाढ शुक्ले गुरौ तिथौ ।
एकादश्यां पटावासे स्वस्यानिनाय हर्षत ॥६९॥ युग्मम्॥
फतेपुरा द्विकानेरे सार्थे लात्वा महोत्सवात् ।
तेनताः प्रतिमाः सर्वाः स्थापिताः स्वजिनालये ॥७०॥
एतेन शुभकार्येणाभूत्संघोत्यन्त हर्षितः ।
कतिपयानि वर्षाणि यावत्तदर्चनाभवत् ॥७१॥
ततस्ताः स्थापिताः श्राद्धैरव्यवस्थादि कारणैः ।
चिन्तामणि चतुर्विंशत् मन्दिर भूमि सद्मनि ॥७२॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

ततो निष्काश्य ताः सर्वास्तत्पुरः क्रियते जनैः ।
महामार्यादि रोगोपशान्तयेष्टाह्निकोत्सवम् ॥७३॥
साहिनाथ प्रसन्नेन मन्त्रिवंशज मन्त्रिणाम् ।
स्त्रीपाद हेमनूपूरं विधत्तुं शिष्टिरर्पिता ॥७४॥
तुरसमाख्य खानात्त गौर्जरीय वणिग्जनाः ।
बहु द्रव्य प्रदानेन सचिवेन विमोचिताः ॥७५॥
सजैनयाचकेभ्योदा दानं बहुतरं पुनः ।
सिद्धाद्रि मथुरा जीर्ण चैत्योद्धार मचीकरत् ॥७६॥
प्रतिदेशं प्रति ग्रामं प्रति पुरं च मन्त्रिणा ।
यावत्काबूल पर्यन्तं करा लंभनिकाः कृताः ॥७७॥
अमात्येन विकानेरे श्रीचन्द्रेण समं पुनः ।
श्रुतान्येकादशाङ्गानि श्रीजयसोम पाठकात् ॥७८॥
श्री श्रुतज्ञान भक्त्यर्थं सिद्धान्तादि विलेखने ।
व्ययी कृतं बहुद्रव्यं श्री कर्मचन्द्र मन्त्रिणा ॥७९॥
एकधा मन्त्रिणा सूरिमुखाद्भगवती श्रुता ।
संस्थापितं प्रतिप्रश्न मेकैकं मौक्तिकं वरम् ॥८०॥
तानि मौक्तिक षट्त्रिंशत्सहस्राण्यऽखिलानि सः ।
चान्द्रोदयादिक ज्ञानोपकरणेष्व भक्तयत् ॥८१॥
द्रव्यं मुक्ताथ मन्त्रीशो मनोहर मचीकरत् ।
श्री रैवतक सिद्धाद्रि नूतन जिनमन्दिरम् ॥८२॥
निषिद्धं मन्त्रिणा राज्ये शाहसिद्धाज्ञयाखिले ।
चतुः पर्विसु हिंसात्म सिकयंत्रादिकर्म च ॥८३॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सर्वं भूपाज्ञयानेन समस्त मरुमण्डले ।
शम्यादि वर वृक्षाणां छेदनं च निषेधितम् ॥८४॥
सिन्धुदेश प्रभुत्वंस मंत्रीप्राप्या निषेधयत् ।
मत्स्य हिंसां सतलज डेकरावी नदीषु च ॥८५॥
हरप्पा कासिनांब्लूची जनानां शक्ति शालिनाम् ।
कृत्वा पराजयं मन्त्री चतुर्विध बलान्वितः ॥८६॥
मोचयित्वा कुलीनांश्च बन्दीजनां स्वसद्मनि ।
नीत्वा संभोज्य सत्कृत्य वस्त्रादिभिर्व्यसर्जयत् ॥८७॥
चैत्ये प्रतिदिनं स्नात्रपूजाकारि च मन्त्रिणा ।
फलवर्द्धि पुरे स्थापि जिनदत्तादि पादुका ॥८८॥
मन्त्रिणोऽजायता जीका कपूरास्त्रीत्रयो भवन् ।
आद्ययो र्भाग्यचन्द्राख्य लक्ष्मीचंद्राभिधो सुतौ ॥८९॥
रायसिंह नृपः पंचसहस्री पद माप्तवान् ।
मन्त्र्युद्योगात्पुना राजपदविभूषितो भवत् ॥९०॥
समं जयपुराधीशाभयसिंहेन धीसखः ।
सन्धि कृत्वा विकानेर राज्य रक्षां च कार च ॥९१॥
बाण वेदाङ्ग चन्द्राब्दे बीकानेर पुरस्य च ।
वर्त्तमानिक दुर्गस्य प्रारम्भो मन्त्रिणा कृतः ॥९२॥
केनाऽपि हेतुना रायसिंह कालुष्य मानसम् ।
स्वस्मिन् ज्ञात्वा वसन्मंत्री कुटम्बैः सहमेडते ॥९३॥
श्रीफलवर्द्धि पार्श्वोऽर्हज्जिनदत्त प्रपूजनम् ।
कुर्वन्मन्त्रीश्वरो भक्त्या वासरान्निरवाहयत् ॥९४॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

बीकानेरं परित्यज्य मेडता गमन क्षणः।
मन्त्रिणोस्या भवत्संवःसाऽध्यङ्केन्दु वत्सरे ।।९५।।
मेडतास्थित मन्त्रीशाकारणायामगमत्तदा ।
राणा श्री मानसिंहादिनृप पत्राणि भूरिशः ।।९६।।
पुराऽपि साहिना मन्त्रि गुणग्रामः श्रुतः स्वयम् ।
दृष्टश्च राजनीत्यादौ महानिपुणतादिकः ।।९७।।
अमात्य प्रेषणायात्र रायसिंह नृपा परि ।
साही लाभपुरात्पत्रं प्रैषीत् स्वफुरमाणकम् ।।९८।।
रायसिंह नृपेणाऽपि प्रेषितं मन्त्रिणं प्रति ।
तत्र प्रगमनादेश पूर्वंतत्फुरमानकम् ।।९९।।
स्वस्वामि रायसिंहाज्ञां प्राप्य मन्त्री शुभेक्षणे ।
विधायगमनं तस्मा द्गजाश्वादि महर्द्धितः ।।१००।।
श्रीजिनदत्तसूरीणां निर्वाण भूमिस्पर्शनम् ।
पादुका दर्शनं कृत्वाऽजमेरौ मार्ग संस्थिते ।।१०१।।
क्रमाल्लाभपुरे मन्त्री मिलितः साहिनं प्रति ।
तेनाऽपि मानसन्मान पूर्वमा भाषितश्चसः ।।१०२।।
युक्तियुक्त वचो जालै र्मधुरैः समयोचितैः ।
साहिनो हृदयं चक्रे निजाधीनं सधीसखः ।।१०३।।
तं प्रत्यऽकबरः सम्राट् सहानुभूति सत्कृपे ।
बाढं प्रकटयन् चक्रे ऽध्यक्षं तस्य सभासदाम् ।।१०४।।
पुनस्तेन प्रसन्नेन श्रीकर्मचन्द्र मन्त्रिणे ।
सुवर्णभूषणौ युक्तो हयश्च स्वगजोऽर्पितः ।।१०५।।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

स्तोकैरेव दिनैःसोभूत्साहि विश्वास पात्रकम् ।
ततः साहीव्यधात्स्वीय कोषाध्यक्षं च मन्त्रिणम् ॥१०६॥
पुनस्तोसाम देशाधिकारी स साहिना कृतः ।
साहिना सह काश्मीर यात्रागमनमस्य च ॥१०७॥
एका सलीम कन्या भून्मूलभ दोष दूषिता ।
तद्दोष शान्तये सोऽष्टोत्तरी स्नात्रमकारयत् ॥१०८॥
तेन साह्याग्रहात्पूर्वं महिमराज वाचकः ।
लाभपुरे ततो ह्वास्तः श्रीजिनचन्द्र सद्गुरुः ॥१०९॥
श्रीजिनसिंहसूर्यादि पददानादि कर्मसु ।
शुभेषु कोटिशोद्रव्यं व्ययीकृतं च मन्त्रिणा ॥११०॥
सर्वव्यापि प्रभावोऽस्य सर्वेषु विषयेष्वभूत् ।
पुनर्दिगन्तर व्याप्ता सुयशः कीर्त्ति कौमुदी ॥१११॥
राजा मीरोऽमरावाश्च मीर खोजाश्च मल्लकाः ।
खानादये ददुर्मान सन्मानं मन्त्रिणे भृशम् ॥११२॥
श्रीलाभपुर तोसाम फलवर्द्धि पुरादिषु ।
स्थापिता मंत्रिणासूरि जिनकुशल पादुका ॥११३॥
खरतर गणानन्य भक्तः श्राद्ध गुणान्वितः ।
चकार धीसखोजैनशासन स्व गणोन्नतिम ॥११४॥
रस बाणाङ्क चन्द्राब्दे राजपुरे सचागमत् ।
दिवं समाधिना स्मारं स्मारं पञ्च नमस्कृतम् ॥११५॥
यदानी तत्र भूमीश रायसिंहः निजात्पुरात् ।
मिलनायागमत्सम्राजकबर जलालदेः ॥११६॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

अन्त्यावस्था नृपो ज्ञात्वा कर्मचन्द्रस्य तद्गृहम् ।
समेत्या दर्शयच्छोक मश्रूपातादि पूर्वकम् ॥११७॥
याते नृपेथतत्स्नेह प्रशंसातत्सुतैः कृता ।
तदा मन्त्रीश्वरो वादीत्सकुटम्बान्सुतान्प्रति ॥११८॥
तत्स्नेह सूचकोऽश्रूणां पातोऽयंनास्ति किन्त्वऽहम् ।
क्षेमेन यशसा कीर्त्या यामि स्वर्ग पथं प्रति ॥११९॥
कदापि न मयाळायि प्रतीकारश्च जीवता ।
इति हेतो र्नरेशाश्रू पातो ज्ञेयोहि हे सुताः ॥१२०॥
वीकानेरं न गन्तव्य युष्माभिः क्षेममिच्छभिः ।
कुटम्बस्यात्मन स्तत्राऽशिवं भविष्यति ध्रुवम् ॥१२१॥
भूपोथ रायसिंहस्त त्प्रतीकार परायणः ।
स्वान्त्यावस्था क्षणसूरसिंहाख्या स्वसुतं प्रति ॥१२२॥
मंत्रिपुत्र प्रतीकार ग्रहणेच्छां प्रकाश च ।
पञ्चत्त्वं गतवान्सूरसिंहो नृपो भवत्तत ॥१२३॥युग्मम्॥
सूरसिंह नृपो दीर्ली गत्वा मन्त्री सुतान्प्रति ।
उत्पाद्यात्यन्त विश्वासं वीकानेरं समानयत् ॥१२४॥
सन्मानपूर्वकं दत्वा तेभ्यो मंत्रिपदं नृपः ।
अन्यदातत् गृहं गत्वा प्रीतिभाव मदर्शयत् ॥१२५॥
तदा तैरपि कृत्वैक लक्षरूप्यक चत्वरम् ।
नृपं सन्मानयामासुः स्वस्वामिनं सुभक्तितः ॥१२६॥
संवन्नंद हयाङ्गेन्दु वर्षे च फाल्गुनार्जुने ।
पितृः वचः स्मरन् भूप क्रुद्धोमन्त्रि सुतोपरि ॥१२७॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

लक्ष्मीचन्द्रः स्वभ्रातृव्य श्रीमनोहरदास युक्।
राजसभां समायात स्तौ तत्र वीरतां गतौ ॥१२८॥
नृप सहस्र योद्धैश्च तद्गृहं परिवेष्टितम्।
विलोक्य भाग्यचन्द्रोऽपि स्वपत्न्यो स्थापितश्चसः ॥१२९॥
निजा निर्गमनंज्ञात्वा सैन्यमध्यात्स्वयं पुनः।
मारयित्वा स्वपत्नीस्व मातरं स्वसुत प्रियाम् ॥१३०॥
युद्धं भयङ्करं कुर्वन् तैः सह मृतवान्स्तदा।
राजसिंहस्य भृत्येन सुवीरत्वं प्रदर्शितम् ॥१३१॥
त्रिभिर्विशेषकम्॥

लक्ष्मीचन्द्रस्यमाता च गर्भवती प्रियासुतौ।
रामचन्द्र रघूनाथौ परम भाग्यशालिनौ ॥१३२॥
तत्पूर्वं तेऽखिलालत्वा गृहसार धनादिकम्।
उदयपुर मागत्य तत्र सुखेन संस्थिताः ॥१३३॥ युग्मम्॥
अद्यापि विद्यमानास्ति तत्र रामेन्दु संततिः।
इति लेशेन मन्त्रीश सच्चरित्रं मया कथि ॥१३४॥
प्राग्वाज्ज्ञातीय मन्त्रीश श्रीवस्तुपाल सन्ततौ।
जोगीदासाख्य संघेशो स्याभवज्जसमाप्रिया ॥१३५॥
तस्याः कुक्षि समुत्पन्नौ श्रीसोमजी शिवाभिधौ।
संघपती सुतौ तस्य राजपुर निवासिनौ ॥१३६॥
तत्र च निर्धनत्वेन चिर्भटी व्यवसायिनौ।
अभूतां जिनचन्द्राख्य सूरीन्द्र प्रतिबोधितौ ॥१३७॥ युग्मम्॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सूरिणा जिनचन्द्रेण महाभाग्योदयं तयोः ।
विज्ञाय नूतनं वस्त्र मानाय्य तत्समीपतः ॥१३८॥
वासाभिमन्त्रितं कृत्वा तद्दत्वा तत्करे कथि ।
या आयान्त्यत्रचिर्भटच्यः प्रग्राह्या अखिलाश्चताः ॥१३९॥
तास्विदं वस्त्रामाच्छाद्य विक्रेतव्याश्चतास्ततः ।
यत्सद्गुरुदितं ताभ्यां सर्वं कृतं तथैव तत् ॥१४०॥
वास चूर्ण प्रभावेन सुमिष्टत्व मुपागताः ।
कन्चित्पुरमालुंटयात्रायाताः साहि सैनिकाः ॥१४१॥
ते सैनिकाः सुमिष्टत्वा दन्यत्रे दृश्यनाप्तितः ।
श्रीष्मत्तौ ता ललुःसर्वा एकादि हेममुद्रया ॥१४२॥
ततो महर्द्धिकौ जातौ पूर्वं पुण्योदयादिमौ ।
श्राद्धोत्तमौ विशेषेण धर्मकर्म परायणौ ॥१४३॥
तीर्थयात्रा नवीनाऽर्ह दिम्ब निर्मापणादिषु ।
जीर्णोद्धार स्वसाधर्मि वात्सल्यादिषु कर्मसु ॥१४४।
एताभ्यां धन तन्वादि स्व सर्वस्व समर्पणात् ।
कृता श्री जैन धर्मस्य महासेवा प्रभावना ॥१४५॥ युग्मम्॥
वेदवेदाङ्ग चन्द्राब्दे संघं निष्कास्य सूरिणा ।
समं सिद्धाद्रि तीर्थस्य यात्रां ताभ्यां कृता पुनः ॥१४६॥
ताभ्यां राजपुरे कारि सुश्राद्धाभ्यां मनोहरम् ।
श्री ऋषभ जिनेन्द्रस्य नूदनं च जिनालयम् ॥१४७॥
अग्निबाणाङ्ग चन्द्राब्दे प्रतिष्ठातस्य कारिता ।
श्रीजिनचन्द्रसूरीन्द्र पार्श्वात्ताभ्यां महोत्सवात् ॥१४८॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

सञ्जातस्तत्र षट्त्रिंशत्सहस्र रूप्यक व्ययः ।
इयानेवाद्यसंघेपि व्ययो भूदनयो पुनः ॥१४६॥
श्रीशत्रुञ्जय तारङ्ग रैवतकार्बुदाद्रिषु ।
कल्याणकर सा गोडी पार्श्वराणपुरादिषु ॥१५०॥
ताभ्यां बृहत्तरान् संघान् प्रनिष्कास्य पुनः पुनः ।
तीर्थयात्रा प्रति द्रङ्गं लम्भनिका कृता पुनः ॥१५१॥ युग्मम्॥
उक्तं च कल्पलतायाम् :—

यद्द्वारे पुनरत्र सोमजि शिवा श्राद्धौ जगद्विश्रुतौ,
याभ्यां राणपुरश्च रैवतगिर श्री अर्बुदस्यस्फुटम् ।
गोड़ी श्रीविमलाचलस्य च महान् संघोनयः कारितो,
गच्छे लम्भनिका कृता प्रतिपुरं रुक्मा द्विमेकं पुनः ॥१॥

ताभ्यां राजपुरे कारि रम्यं जिनालयत्रयम् ।
धनासुतार रथ्यायामृषभजिनमन्दिरम् ॥१५२॥
चैत्येऽस्मिन् स्थापिता मूर्त्तिः श्रीजिनचन्द्र सद्गुरोः ।
निजोपकारिणोद्यापि विद्यमानास्ति तत्र सा ॥१५३॥
झवेरीवाटकान्तस्थ चतुर्मुखस्य पोलके ।
हाजापटेल रथ्यायां शान्तिनाथ जिनालयम् ॥१५४
ताभ्यां शत्रुञ्जये कारि चैत्यं चतुर्मुखाकृति ।
रम्यं विशाल मुत्तुङ्गं श्री ऋषभ जिनेशितु ॥१५५॥
निर्मापणेस्य षट्पञ्चाशल्लक्ष रूप्यक व्ययः ।
चतुरशीति सहस्र रूप्य दवरिका भवत् ॥१५६॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वर्गं गतयो स्तयो पश्चात्सोमजी वर सूनुना ।
रूपचन्द्रेण बाणाश्व रस शशाङ्क वत्सरे ॥१५७॥
श्रीजिनराजसूरीन्द्र पार्श्वाच्छत्रुञ्जयोपरि ।
जिनेन्द्र चैत्य चैत्यानां प्रतिष्ठा च विधापिता ॥१५८॥युग्मम्॥
खरतर वसह्याख्य चतुर्मुखाभिध द्वयात् ।
अद्यापि मनुजैः श्रेष्ठं तच्चैत्य मुपलक्ष्यते ॥१५९॥
श्री सोमजी शिवा श्रेष्ठि वात्सल्यं निज धर्मिषु ।
अभूत्प्रशंसनीयानुकरणीयं सुधर्मिणाम् ॥१६०॥
कोप्य परिचिताज्ञात दुस्थ साधर्मिकोन्यदा ।
विपत्ति समये षष्टि सहस्र रुप्य हुण्डिकाम् ॥१६१॥
तन्नाम्ना प्रेषयाद्राजपुरे साच समागता ।
सोमजी श्रेष्ठिनावाचि वहिका च विलोकिता ॥१६२॥युग्मम्॥
परं न निर्गतं नाम तस्य सोथ विचारयन् ।
तत्पत्रे कालिमा मश्रु पातसत्कां विलोक्य च ॥१६३॥
सङ्कटे पतितं ज्ञात्वा स्वधर्मिणं सुदुःखिनम् ।
तां हुण्डीं भृतवानवह्यां स्वव्यये लेखयच्चत्तान् ॥१६४॥युग्मम्॥
कियद्भिर्वासरैः पश्चात्तेन साधर्मि बन्धुना ।
तत्रैत्य श्रेष्ठिनो रुप्य प्रत्यर्पणाग्रहं कृतम् ॥१६५॥
श्रेष्ठिना वादि युष्माभिः सहास्माकं कदापिभोः ।
प्रत्यादान समादान व्यवहारो बभूव न ॥१६६॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

तत स्तस्याति निबंधा च्छ्रेष्ठिना संघ साक्षिकम् ।
व्ययी कृताश्च ते सर्वे शान्तिनाथ जिनालये ॥१६७॥

अनेना नैकशो ग्रन्थान् लेखयित्वा पुनः पुनः ।
प्रति स्थानं कृता ज्ञानकोष वृद्धि मनोहरा ॥१६८॥

अन्येऽपि बहवः श्राद्ध श्राद्धी जनास्तदा भवन् ।
जिनचन्द्रगुरो र्भक्ता धर्मकृत्य परायणा. ॥१६९॥

यथा—राजनगरे मंत्रि सारङ्गधर सत्यवादी, स्तम्भनपुरे भण्डारी वीरजी, रांका वर्द्धमानः, नागजी, वच्छा, पदमसी देवजी जेतसाहः, भाणजी, हरखा, हीरजी, मांडण, जावड, मणुआ सहजिया, अमियासाह, सांभलि नगरे मूलासाह, सामीदास, पूरू, पदु, वस्तू, गांगू, धरमू, लख; आगरापुरे श्री वच्छासाह, लक्ष्मीदास; सिद्धपुरे वन्नासाह, रोहिठ्ठपुरे साहधीरा मेरा, वेनातट कटारिया जूठासाह; रीणीपुरे मन्त्रिराजसिंह, सांकरसुत वीरदास, लाभपुरे जवेरी पर्वतसाह, सिन्धुदेशे घोरवाड़ साह नानिगसुतराजपाल; जैसलमेरौ भणशालि थाहरुसाह; नागपुरे मंत्रि मेहा; बीकानेरे बोहित्थ गोत्रि मत्रि दसू महेवापुरे कांकरीया गोत्रि साह कम्मा मेड़ता-पुरे चोपड़ा गोत्रि साह आसकरणादि श्रावकाः नयणा, वींजू, गेली, कोडा, रेखादि श्राविकाश्च बभूवुः ।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

राजेश साह्यकबर प्रतिबोधस्य,
श्रीजैनशासन समुन्नति कारकस्य।
श्री मज्जगद्गुरु सवाइ युगप्रधानः,
भट्टारकस्य चरिते जिनचन्द्रसूरेः ॥१७०॥

इति श्री सवाई युगप्रधान सद्गुरु श्री जिनचन्द्रसूरि चरित
महाकाव्ये मन्त्रि कर्मचन्द्रादि श्रावक वर्णात्मकः षष्ठः सर्ग
समाप्तः।

॥ प्रशस्तिः ॥

अत्र शाखा प्रशाखाभिः सूरि पाठक वाचकैः ।
कविभिः पण्डितैः सद्भिः साधुभिः श्रावकोत्तमैः ॥१॥
परिशोभाय मानोस्ति गणः खरतराभिधः ।
सुविहित तया सत्य तया ख्यातिं गतो जने ॥२॥
तत्र परम्परा याता स्तेजस्विनः प्रजज्ञिरे ।
संघाधारा महाप्राज्ञा जिनमहेन्द्रसूरयः ॥३॥
जिनमहेन्द्रसूरीन्द्र दत्तदीक्षा मुमुक्षवः ।
शिष्या रूपचन्द्रस्या सन्मोहन मुनीश्वराः ॥४॥
तेषां शिष्या महादक्षा सूरिगुण विराजिताः ।
श्रीमज्जिनयशः सूरीश्वरा आसन्महोदयाः ॥५॥
तल्लघु बान्धवाः शान्ताः श्रीराजमुनयो भवन् ।
गणि रत्नमुनिस्तेषां शिष्यो ज्ञान-क्रिया युतः ॥६॥
तल्लघु बन्धुना लब्धिमुनिना चरितं कृतम् ।
केशरमुनि पंन्यास गणि शिष्टचनुवर्त्तिना ॥७॥
बीकानेर पुरस्थायि नाहटा भिध गोत्रिणा ।
पुण्य प्रभाविना देव-गुरु-भक्ति विधायिना ॥८॥
श्रद्धालुनाप्र धर्मस्य स्वगणानन्य रागिणा ।
अगरचन्द्र भँवरलाल श्राद्धोत्तमेन च ॥९॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

महा परिश्रमाद्ग्रन्थ रास विहार पत्रतः।
हिन्दी भाषामयं चक्रे चरितं चन्द्र सद्गुरोः ॥१०॥

त्रिभिर्विशेषकम्॥

तस्य महानुभावस्याग्रहात्तदनुसारतः।
श्री भुजनगर द्रङ्गे श्रीकच्छ विषयस्थिते ॥११॥
वैशाख कृष्ण सप्तम्यां कराङ्काङ्केन्दु वत्सरे।
श्री जिनचन्द्रसूरीणामकारि चरितं मया ॥१२॥

इति श्री सवाई युगप्रधान भट्टारक परम पितामह, सम्राट अकबर जहाँगीर प्रतिबोधक श्रीजिनचन्द्रसूरि चरितम् समाप्तम् ॥

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

प्राप्तिस्थान :

अभयचन्द सेठ
७, देवदार स्ट्रीट
कलकत्ता-१६

लक्ष्मीचन्द सेठ
५५ ए, दिलखुशा स्ट्रीट
कलकत्ता-१७

भँवरलाल नाहटा
५

Serving JinShasan
026139
gyanmandir@kobatirth.org

मुद्रक—सेठ प्रिन्टर्स, ७ए/बी, धर्मतल्ला स्ट्रीट, कलकत्ता-१२

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org